Chapter-2

द्वितीय - अध्याय

जीवन -परिचय

"गोस्वामी हरिराय जी अपनी प्रौढ़ावस्था में महाप्रभु श्री वल्लभाचार्य के अनुरूप भगवत्प्रेम, विरहानुभूति, दीनता, त्याग, सहिष्णुता, विद्वता एवं कर्मठता में निमग्न रहते थे। इसी कारण जीवन की सान्ध्य-बेला में उन्हें 'महाप्रभु' की सम्माननीय उपाधि से भी अलंकृत किया गया था। यह विशिष्ट उपाधि महाप्रभु श्री वल्लभाचार्य के पश्चात् गोस्वामी श्री गोकुलनाथ जी को प्राप्त हुई थी। इनके पश्चात् यह महान् उपाधि गोस्वामी हरिराय जी को ही मिल सकी। यह उनकी विद्वता एवं जन-सम्मान की प्रतीक थी"।

गोस्वामी हरिराय जी

जीवन - वृत्त

परिवार-गत | सम्प्रदाय- गत | साहित्य- गत

विगत अध्याय में हम गोस्वामी हरिराय जी की समकालीन सामाजिक, राजनैतिक व सांस्कृतिक परिस्थितियों का अवलोकन कर चुके हैं। विवेच्य अध्याय में गोस्वामी हरिराय जी के जीवन वृत्त से सम्बन्धित तथ्यों का अपेक्षित समाकलन प्रस्तुत किया जारहा है।

> भारतीय प्राचीन परम्परा का अनुकरण करते हुए गोस्वामी हरिराय जी ने भी अपने जीवन के सम्बन्ध में स्वकीर्ति-गान की उपेक्षा करते हुए कहीं कुछ भी उल्लेख नहीं किया। उनके जीवन-चरित्र पर कुछ-क अन्य विद्वानों ने अवश्य कुछ प्रकाश डाला है। इसके अतिरिक्त गोस्वामी हरिराय जी के कुछ ग्रन्थों में भी इस ओर यत्किंचित संकेत मिलते हैं। जिनसे इनके व्यक्तित्व पर प्रकाश पड़ता है। फलतः गोस्वामी हरिराय जी के जीवन परिचय के लिये आज वाह्य - साक्ष्यों व परम्परागत-जनश्रुतियों का ही आधार प्राप्य है। कतिपय आधारों के परिप्रेक्ष्य में ही यहाँ गोस्वामी हरिराय जी का जीवन-वृत्त समायोजित किया जारहा है।

परिवार-गत

::पूर्वज:: गोस्वामी हरिराय जी का जन्म महाप्रभु श्री वल्लभाचार्य जी के वंश में हुआ था। महाप्रभु वल्लभाचार्य के देहावसान के उपरान्त उनके पुत्र गोस्वामी विट्ठलनाथ जी बहुश्रुत व्यक्तित्व थे। उनके सात पुत्र हुए, जिन्हें 'सात घरों' के नाम से जाना जाता है। गोस्वामी-

विट्ठलनाथ जी सम्प्रदाय में 'गुसाईं जी' के नाम से प्रसिद्ध हैं। गुसाईं जी के द्वितीय पुत्र का नाम श्री गोविन्द राय जी था। गोविन्दराय जी के चार पुत्र उत्पन्न हुए थे- कल्याणराय जी, गोकुलोत्सव जी, कृष्णराय जी एवं लक्ष्मीनृसिंह जी। कल्याण राय जी ज्येष्ठ भ्राता थे। इनका जन्म संवत् १६२५ कार्त्तिक शुक्ला चतुर्दशी को हुआ था।१ गोस्वामी हरिराय जी गोस्वामी कल्याणराय जी के पुत्र थे।

कल्याणराय जी का अधिकांश समय गोकुल में व्यतीत हुआ था। गुसाईं जी की उपस्थिति में उनका लालन पालन हुआ था

पिता

उल्लेख मिलता है कि 'एक समय वल्लभाचार्य जी के ज्येष्ठ भ्राता केशव पुरी गोकुल में गुसाईं जी से मिलने आए। ये महाशय सन्यासी जीवन व्यतीत करते थे। स्थान- स्थान पर इनके शास्त्रार्थ भी होते रहते थे। इन्होंने गुसाईं जी से कहा कि इनकी गद्दी के लिये उत्तराधिकारी हेतु कोई शिशु चाहिये। बालक कल्याण राय, जो गुसाईं जी के पौत्र थे, वहाँ उपस्थित थे, उन्होंने समझा कि सम्भवत: गुसाईं जी उन्हें ही केशवपुरी के साथ भेजेंगे। इस विचार से कल्याणराय जी भयभीत हुए। वे गुसाईं जी से पृथक् रहने की कल्पना से ही विचलित हो गए। उस समय उनकी आयु दस वर्ष की थी। केशवपुरी के विचारों को सुनकर वे रोते हुए गुसाईं जी के समीप आए, और एक स्वरचित पद - 'हौं ब्रज मांगनौ जू' - उन्हें गाकर सुनाया। गुसाईं जी बालक का भावोद्वेग देखकर गद्गद होगये। उन्होंने अपना अधरस्पर्शित ताम्बूल उन्हें दिया। केशवपुरी के साथ न भेजने का भी उन्हें अभय बचन दिया।२ इस प्रसंग से ज्ञात होता है कि गुसाईं जी की कल्याणराय जी पर अति कृपा थी। कल्याणराय जी इस छोटी

---

(१) श्री वल्लभ- वंश वृक्ष -- सम्पा० गो० व्रजभूषण शर्मा।

(२) श्री हरिराय जीना जीवन दर्शन - भाग-१,२ प्रका० सावली पृ० २०

आयु में भी पद-रचना कर लेते थे ।

सम्प्रदायगत विश्वास के आधार पर कहा जाता है कि कल्याणराय जी का प्रथम विवाह लगभग पन्द्रह वर्ष की आयु में हुआ था । उसके दो साल पश्चात् ही उनकी धर्मपत्नी का देहावसान होगया । कल्याणराय जी की द्वितीय विवाह की कदापि इच्छा नहीं थी । उनकी माता इस बात से चिंतित थीं कि यदि उनका ज्येष्ठ पुत्र विवाह न करेगा तो वंश कैसे चलेगा ?

गुसाईं जी के देहावसान के समय कल्याणराय जी की आयु सत्रह वर्ष की थी । पत्नी एवं पितामह के वियोग से उन्हें बड़ा ही आघात पहुँचा था । अन्त में गोस्वामी गोकुल नाथ जी के कहने से वे पुनर्विवाह के लिये सहमत होगए । विट्ठलनाथ जी के परलोक गमन से ही कल्याणराय जी एवं उनके भ्राता घनश्यामराय जी गोस्वामी गोकुलनाथ जी के संरक्षण में रहने लगे । गोकुलनाथ जी कल्याणराय जी के स्वभाव से भली-भाँति परिचित थे । उनके विरक्त भाव को देखकर कोई भी सद्गृहस्थ उन्हें कन्या देने के पक्ष में न था । ऐसी विषय - अवस्था में गो० गोकुलनाथ जी ने भविष्यवाणी की कि 'इनका प्रथम पुत्र महान-प्रभुत्व-शाली होगा' । इस घोषणा के फलस्वरूप इक्कीस वर्ष की आयु में इनका दूसरा विवाह सम्पन्न हुआ ।

उनकी दूसरी पत्नी का नाम 'जमुना' था । जिनसे तीन पुत्र हुए । हरिराय जी उनमें ज्येष्ठ पुत्र थे । हरिराय जी में अपने प्रपितामह गुसाईं श्री विट्ठलनाथ जी के गुण विद्यमान थे । कालान्तर में ये उन्हीं के अनुरूप प्रख्यात भी हुए ।

:: जन्म ::

हरिराय जी का जन्म संवत् १६४७ में हुआ था। श्री विट्ठलनाथ भट्ट[1]। डा० दीनदयालु गुप्त[2], डा० हरीहर नाथ टण्डन[3], श्री प्रभुदयाल मीतल[4], श्री द्वारका दास परिख[5] आदि सभी विद्वानों ने यह जन्म संवत् स्वीकार किया है। श्रीद्वारका-दास परिख ने अपने ग्रन्थ गो० हरिराय जी नूं जीवन-चरित्र में इनके जन्म के प्रसंग में दो मत दिए हैं। इन्होंने संवत् १६४५ तथा संवत् १६४७ दो संवतों पर जन्म सम्बन्धी विचार व्यक्त किये हैं, किन्तु अन्त में इन्होंने संवत् १६४७ को ही उचित संवत् स्वीकार किया है। भाद्रपद (गुर्जर) कृष्णा पंचमी हरिराय जी की जन्म-तिथि थी।

जन्म-स्थान

गुसाईं जी के समय से ही प्राय: सभी गोस्वामी परिवार गोकुल में स्थायी रूप से निवास करते थे। हरिराय जी के पितामह गोविन्दराय जीनेगोकुल में ही एक मन्दिर बनवाया था। उनकी सर्वाधिक आयु उसी स्थान पर व्यतीत हुई थी। कल्याणराय जी भी गुसाईं जी के समीप गोकुल में ही रहा करते थे। कल्याण राय जी का विवाह गोकुल में ही हुआ था। हरिराय जी का जन्म भी गोकुल में ही हुआ। गोपिकालंकार जी भट्टू जी ने हरिराय जी की बधाई में गोकुल का ही उल्लेख किया है।[6] श्री प्रभूदयाल-

---

(१) गोविंद सुत कल्याण के प्रगटे फिर हरिराय। भादव कृष्णा षष्ठिकों मुनिफल कला वधाय। -- सम्प्र० कल्पद्रुम- पृष्ठ-११६

(२) अष्टछाप व वल्लभ सम्प्रदाय (भाग-१) पृष्ठ- ८०

(३) वार्ता साहित्य एक वृहद् अध्ययन -- पृष्ठ-

(४) गो० हरिराय जी का पद - साहित्य (प्रकाशित) पृष्ठ- ५

(५) गो० हरिराय जी नूं जीवन-चरित्र (गुजराती) पृष्ठ- १२

(६) देत असीस सदा जीवौ यह, सदा बसौ श्री गोकुल ग्राम।
-- वर्षोत्सव - (भाग-२) पृष्ठ-१७८

मीतल के अनुसार भी 'श्री हरिराय जी के समय में गोकुल वल्लभ - सम्प्रदाय का प्रधान केन्द्र था। गुसाईं जी के सातों पुत्रों, उनके वंशजों तथा सेव्य - स्वरूपों के कारण वह वल्लभ सम्प्रदायी भक्त-जनों का प्रमुख तीर्थ स्थल बना हुआ था। ऐसी पुण्य-भूमि के धार्मिक वातावरण में गोस्वामी हरिराय जी का जन्म हुआ था'।१-अ

::जन्मोत्सव::

जिस समय हरिराय जी का जन्म हुआ, समस्त व्रज-मण्डल में खुशी की लहर छागई। घर - घर में आनन्द मनाया जाने लगा इस समय गोस्वामी गोकुल नाथ जी विशेष प्रसन्न थे। इन्हीं की आज्ञा से कल्याणराय जी का द्वितीय विवाह सम्भव हो सका था। जिसके परिणाम-स्वरूप इस सुकुमार - शिशु का मुंख देखने को मिला था। वल्लभ-सम्प्रदाय में अब भी प्रति वर्ष इनका जन्म-दिन उत्सव के रूप में मनाया जाता है।

-। जन्म-बधाई ।-

शिशु- हरिराय के जन्म होने पर झांझ-मृदंग, ढ़ोल, शहनाई आदि वाद्य बजाए गए थे।१ मंगला-चरण का गान हुआ। बधाइयां गाई गईं।२ उनके जन्म-का समाचार सुन कर ब्राह्मण, गुनीजन, भाट तथा गायिकाएँ दौड़ - दौड़ कर उनके द्वार पर एकत्र होगईं।३ सभी को गाय, वस्त्र, आभूषण आदि का दान दिया गया।४

(१-अ)- गो० हरिराय जी का पद साहित्य, (प्रकाशित), भूमिका।

(१) बाजत मंगलाचार बधाईं, झांझ मृदंग ढ़ोल शहनाईं।

(२) नर-नारी सब निरखन आए, गावत गीत अनंद बधाईं।

(३) सुनधाए द्विज, गनक, गुनीजन, द्वार भईं अति भीर।

(४) देत सबै मन पूरन करिकैं, गोधन भूषन चीर।

-- गो० हरिराय जी की बधाईं-

वार्षोत्सव (भाग-२) पृष्ठ- १७८

कवियों ने इनके जन्म की बधाइयाँ गाईं---

--- प्रगटे श्री हरिराय श्री कल्याणराय के धाम ।१

---- प्रगटे श्री हरिराय महाप्रभु श्री विट्ठल प्रतिरूप कहाई ।२

----- प्रगटे श्री विट्ठनाथ गुसाईं निजकुल ही मैं फेर ।३

------- इस प्रकार के बधाई-पदों से गोस्वामी हरिराय जी की प्रतिष्ठा के संकेत सहज ही प्राप्त हो जाते हैं ।

सम्प्रदायगत जन-धारणा है कि हरिराय जी गोस्वामी विट्ठलनाथ जी के प्रति रूप में जन्मे थे । जैसा कि विगत पृष्ठों में उल्लेख किया जा चुका है, कल्याणराय जी के 'हौं ब्रज मांगनौ जू' प्रसंग में गुसाईं जी ने अपना मुख-चर्वित - ताम्बूल उन्हें प्रसाद रूप में दिया था । इसी आधार पर सम्प्रदाय के अनुयायियों तथा विद्वानों ने यह माना है कि गुसाईं जी के ताम्बूल प्रदान करने पर कल्याण राय जी के अन्दर गुसाईं जी का अलौकिक- तेज पुंजीभूत होगया था और हरिराय जी उसी तेज के साकार रूप में प्रकट हुए थे । इसी आधार पर हरिराय जी को गुसाईं जी का अवतार अथवा प्रतिरूप कहा जाता है । --

-) लोक - मान्यता (-

-- प्रगटे श्री विट्ठलनाथ गुसाईं निजकुल ही मैं फेर ।
दै चर्वित ताम्बूल पौत्र कौं, निकट आपने टेर ।।
सोई प्रभु कल्याणराय पर निज स्वरूप वपु-धारी ।
श्री हरिराय नाम है तिनकौ, दीनन के दु:ख-हारी ।।४

---

(१) वर्षोत्सव (भाग-२) सम्पा० लल्लू भाई छगनलाल देसाई पृ० १७८
(२) वही । --(प्रकाशन- अहमदाबाद)
(३) वही ।
(४) वही ।

इस मान्यता की स्थापना के सम्बन्ध में अन्य भी कितने ही पद मिलते हैं जिनमें से कुछ विगत विवेचन में प्रस्तुत किए जा चुके हैं ।

+X बाल्यकाल X+

हरिराय जी का शिशु - जीवन गो० गोकुलनाथ जी के संरक्षण में ही व्यतीत हुआ था । गोकुलनाथ जी अपनी विद्वता के कारण लोक में पर्याप्त प्रसिद्धि प्राप्त कर चुके थे । हरिराय जी पर इनकी विशेष कृपा थी । एक समय हरिराय जी गो० गोकुल नाथ जी की बैठक में खेल रहे थे, उस समय गोकुलनाथ जी वहाँ उपस्थित नहीं थे । उसी समय गो० हरिराय जी खेलते हुए गोकुलनाथ जी की गद्दी पर बैठ गये । वहाँ पर बैठे हुए अन्य व्यक्तियों को, जो गोकुल नाथ जी के अनुयायियों में से थे, यह उचित न लगा कि उनके आचार्य की गद्दी पर कोई 'अनधिकारी' बैठ जाये । उन वैष्णव अनुयायियों में से किसी एक ने हरिराय जी को गद्दी पर बैठने से मना किया, किन्तु चपल हरिराय नहीं माने । इस पर उसी व्यक्ति ने जोर से चिल्ला कर निषेध किया । शिशु-सुलभ वृत्ति के अनुरूप हरिराय जी गद्दी से उतर कर गो० गोकुलनाथ जी के समीप गए और रोकर कहा कि किसी वैष्णव ने उन्हें इस तरह गद्दी पर से उतार कर धमकाया है । गोकुल नाथ जी 'बैठक' में आए तथा उस वैष्णव को समझाया कि जो बालकों से द्वेष करता है, वह भगवान् से भी द्वेष करता है । उक्त वैष्णव को इस प्रकार के कृत्य पर गोकुलनाथ जी से क्षमा-याचना करनी पड़ी ।

इस घटना से ज्ञात होता है कि गो० गोकुलनाथ जी का हरिराय जी पर अत्यधिक वात्सल्यमय स्नेह था । हरिराय जी का बाल्यकाल उन्हीं के संरक्षण में व्यतीत हुआ था, अपने सम्प्रदाय के विधानानुसार ये बाल्यकाल से ही सेवा-पूजा में रत रहते थे । अत: हरिराय जी पर गो० गोकुलनाथ जी के आचरणों का बहुत गहन प्रभाव पड़ा ।

शिक्षा- दीक्षा - ---

हरिराय जी की शिक्षा - दीक्षा किसी विद्यालय में सम्पन्न नहीं हुई । गोस्वामी गोकुल नाथ जी ने ही घर पर उन्हें विद्याभ्यास कराया था । बालक को घर पर ही कुटुम्ब के विद्वान - सदस्यों द्वारा विद्याभ्यास कराने की इस सम्प्रदाय में परम्परा रही है ।

हरिराय जी का सम्पूर्ण विद्याध्ययन गोस्वामी गोकुल नाथ जी के ही सान्निध्य में सम्पन्न हुआ था । शीघ्र ही वह अपने विषय में पारंगत होते चले गए । वह बाल्य-काल से ही अप्रतिम- प्रज्ञा के धनी थे ।

संवत् १६५५ में जब वह केवल आठ वर्ष के थे, उनका यज्ञोपवीत संस्कार सम्पन्न हुआ । इस संस्कार - आयोजन में कुटुम्ब का प्रतिष्ठित वयोवृद्ध बालक को गुरु-दीक्षा प्रदान करता है । हरिराय के यज्ञोपवीत संस्कार के समय गुसाईं जी के सबसे बड़े पुत्र गिरधर लाल जी जीवित थे । दीक्षा देने का अधिकार भी वस्तुत: उन्हीं को था । किन्तु श्री गिरधर लाल जी ने स्वयं उन्हें दीक्षा न देकर गोकुलनाथ-जी ने ही हरिराय जी को गुरुदीक्षा दी और उनके दीक्षा-गुरु कहलाये ।

--।। संस्कार ।।--

गोकुलनाथ जी जैसे वर्चस्व के धनी, आचरण के आगार व्यक्ति को गुरु-रूप में पाकर हरिराय जी का बौद्धिक विकास दिन पर दिन निखरता ही चला गया । संस्कृत-साहित्य का उन्हें उम्यक अध्यास कराया गया । साम्प्र - दायक ग्रन्थों का भी विधिवत् पूर्ण ज्ञान कराया गया । अपने अध्ययन काल में ये सभी विद्वानों का सहयोग प्राप्त करते रहते थे । 'श्री मद्भागवत्' एवं सर्वोत्तम ग्रन्थों पर इनका महाप्रभु वल्लभाचार्य तथा गुसाईं जी की भाँति अधिकार प्राप्त था । बाल्यकाल से ही इनमें साहित्य के प्रति अतीव रुचि थी ।

स्वभाव

हरिराय जी अपने बाल्यकाल से ही अत्यन्त सरल स्वभाव के थे। अपने स्वभाव के कारण वह यत्र-तत्र वैष्णवों के सत्संग हेतु निकल जाया करते थे। उनके वंश की प्रचलित रीति के अनुसार एक गोस्वामी बालक को बाहर निकल कर वैष्णवों के बीच भ्रमण करने की अनुमति नहीं थी। हरिराय जी के पिता कल्याणराय जी को जब यह ज्ञात हुआ, तब उन्होंने किशोर हरिराय को अपने समीप बुला कर पूछा कि क्या वे इस तरह घूमते-फिरते हैं ? क्या वे अर्धरात्रि तक वैष्णवों के बीच भगवत् रहस्य का विवेचन करते रहते हैं ? किशोर हरिराय ने ये सभी आक्षेप स्वीकार कर लिए। कारण पूछने पर बताया कि हम सब भी तो वैष्णव ही हैं। फिर यह वर्ग भेद क्यों ? वैष्णवों के सत्संग से अन्तर्निहित अलौकिक प्रेम-भाव जागृत होता है। अतएव वैष्णवों को भगवद् - भक्तों से अवश्य ही सत्संग करना चाहिए।

हरिराय जी की हठधर्मी तथा अपनी वंश की मर्यादा को देखते हुए कल्याणराय जी ने उन्हें एक कमरे में बन्द करके ताला लगा दिया, जिससे वह कहीं बाहर न जा सकें। दोपहर के समय उनके लिए भोजन भेजा गया किन्तु हठी हरिराय जी ने खाने से मना कर दिया। रात्रि-काल में भोजन के समय कल्याण-राय जी ने उन्हें फिर खाने के लिए बुलावा भेजा, तब भी वह नहीं माने। तब कल्याण राय जी स्वयं उनके कमरे के समीप गए और ताला खोलकर देखा तो उन्हें एक अलौकिक अग्निपुन्ज- सा अवलोकन हुआ। सम्प्रदाय में वल्लभाचार्य जी को अग्नि का अवतार माना जाता है। इसी लिए कल्याणराय जी ने अपने प्र-पितामह के स्वरूप का ध्यान कर उन्हें नमन किया, क्षणभर में ही यह भावावेश समाप्त हो गया। पिता कल्याण राय जी का ममत्व उमड़ पड़ा उन्होंने हरिराय जी को ध्यानावस्थित देख उनके सिर पर वात्सल्यभाव से हाथ फेरा, पश्चात् उनको स्नेहपूर्ण व्यवहार से प्रभावित कर भोजन के लिये तैयार किया।

इस घटना के बाद गोस्वामी हरिराय जी स्वेच्छा से कहीं भी सत्संग हेतु पहुंच जाते थे ।१ इस घटना से स्पष्ट होता है कि उनके स्वभाव में लोक - कल्याण व लोक - प्रेम की भावना प्रारम्भ से ही विद्यमान थी । सत्य एवं ज्ञान के प्रति वह सदैव उत्सुक रहे थे ।

-)(-
पारिवारिक
स्थिति

०

माता जमुना के तीन पुत्रों में हरिराय जी ज्येष्ठ थे । गोपेश्वर जी एवं विट्ठलेश जी उनके अन्य सहोदर थे, इनमें सब से छोटे भाई विट्ठलेश जी दीर्घ-जीवी न हुए इसीलिए सम्प्रदाय में उनका नाम विशेष ख्यात नहीं है, गोपेश्वर जी हरिराय जी के लघुभ्राता थे । गोस्वामी हरिरायजी की प्रसिद्ध संस्कृत - रचना 'शिक्षा-पत्र, इन्हीं के लिये लिखे गए पत्रों का संग्रह है । हरिराय जी संयुक्त - परिवार में विश्वास रखते थे । यही कारण है कि पूर्वजों के पीढ़ी-पीढ़ी दर विभाजन होने पर भी वे गोपेश्वर जी के साथ पारिवारिक सम्बन्ध बनाए हुए थे ।

आर्थिक-दृष्टि से भी हरिराय जी सम्पन्न थे । गुसाईं जी के समय से ही इस वंश के अनुयायियों में वैभव की कमी नहीं थी । हरिराय जी भी धन-धान्य से पूर्णतया सम्पन्न थे । फलत: उनकी आर्थिक स्थिति सम्पन्न धनिकों जैसी थी, --'हरिराय जी कैं सब असवारी सिद्ध रहतीं । सुखपालकी, तथा घुड़वेल तथा बैलन को रथ, तथा एक हाथी । इतनी असवारी सदा रहती, तामें सूं एक एक असवारी एक एक पहर ड्योढ़ी पैं आयकैं ठाड़ी रहती ।२'

---

(१) देखिये-- गो० हरिराय जी महाप्रभु जी नूं जीवन चरित्र (गुजराती)
-- प्रकाशन सावली (भाग १-२) पृष्ठ- २६

(२) श्री गोवर्धन नाथ जी की प्राकट्य वार्ता- गो० हरिराय जी
-- प्रकाशन नाथद्वारा, सं० २०३६ पृष्ठ- ८४

'गाय-उपचार' के एक विशेष प्रसंग में कुछ विधर्मियों को उनका वैभव देखकर ईर्ष्या हुई थी । वैभव के प्रति आकर्षित होकर ही औरंगजेब की लोलुप-दृष्टि भी इनकी ओर घूम चुकी थी । परिणाम-स्वरूप उन्हें ब्रज-भूमि का मोह भी त्यागना पड़ा था । मेवाड़ के राणा रायसिंह से उनके घनिष्ट सम्बन्ध थे । इसके अतिरिक्त अनेक धनी-मानी व्यक्ति, उनके शिष्य थे । राजकुमारी, राणा रायसिंह आदि के सम्बन्ध की चर्चा प्रसंगान्तर से भिन्न स्थल पर पृथक् से प्रस्तुत की गई है ।

दैनिक-जीवन में वह सामान्य आभूषण तथा सादे - वस्त्र ही धारण किया करते थे । धोती, अंगरखी या बगलबन्दी, सिर पर हल्की सी पगड़ी, उपरना, कानों में कर्णाभूषण तथा गले में हल्का - सा स्वर्णहार उनकी दैनिक वेश-भूषा थी । इस प्रकार की वेश-भूषा के उनके अनेक चित्र भी उपलब्ध होते हैं ।

विवाह:-

हरिराय जी का विवाह चौबीस वर्ष की आयु में हुआ था । हरिराय जी की धर्मपत्नी का नाम 'सुन्दरवती' था । इनके सम्प्रदाय में उन्हें 'सुन्दरवन्ता' के नाम से भी सम्बोधित किया जाता है ।

उस समय हिन्दू- समाज में यद्यपि बाल विवाह का प्रचलन था, किन्तु हरिराय जी का विवाह इससे भिन्न-पूर्ण युवावस्था में हुआ था । इस प्रसंग से पुष्टि-मार्ग की सामाजिक चेतना का स्वरूप स्पष्ट होता है । हरिराय जी से पूर्व महाप्रभु बल्लभाचार्य जी का विवाह भी २४ वर्ष की आयु में ही सम्पन्न हुआ था ।

-:: पत्नी- और - उनका वैशिष्ठ्य

हरिराय जी की पत्नी सुन्दरवती अत्यन्त धार्मिक प्रवृत्ति की थी। वह सम्प्रदाय में साहित्य-सृष्टा के रूप में प्रसिद्ध है। उन्होंने 'दासी-सुन्दर' छाप से गुजराती व ब्रजभाषा में अनेक सुन्दर 'धोल-पद' लिखे हैं, जिनका पुष्टि-मार्गीय साहित्य में समुचित आदर है। आज भी पुष्टि-मार्गीय मन्दिरों में महिला-वर्ग द्वारा इनके रचे 'धोल-पदों' का सामूहिक गान बड़े ही उल्लास के साथ होता रहता है।

उन्होंने धोल-पदों[१] में राधा-कृष्ण की विविध लीलाओं को चित्रित किया है। काव्य की दृष्टि से चित्रात्मक शैली में लिखे ये धोल भावोद्वेग से परिपूर्ण अत्यन्त सरल एवं सरस बन पड़े हैं। इन धोल पदों में चिन्तन का धोल अत्यधिक प्रसिद्ध है। इस धोल-पद में 'सुन्दर -दासी' अथवा 'दासी-सुन्दर' नामक छाप मिलती है। धोल-पदों की अनेक प्राचीन हस्तलिखित प्रतियाँ प्राप्त हुई हैं।

विषय-वस्तु की दृष्टि से चिंतन का धोल विशुद्ध श्रृंगार-प्रधान रचना है। इसमें श्रृंगार के स्थूल चित्र मिलते हैं। साधारण दृष्टि से देखा जाय तो ये पद किसी नारी हृदय की अभिव्यक्ति नहीं जान पड़ते, किन्तु परम्परागत मान्यता तथा प्राचीन हस्तलिखित प्रतियों के आधार पर इनकी लेखिका सुन्दरवती 'बहू जी' को ही माना है।

इस चिन्तन के धोल-पद की लेखिका 'दासी-सुन्दर' अथवा 'सुन्दर-दासी' गो० हरिराय जी की धर्मपत्नी थीं, इसका प्रमाण कतिपय हस्तलिखित तथा प्रकाशित ग्रन्थों में प्राप्त होता है।--

'हरिराय जी नी बहूजी कृत चिंतन नु धोल'। २

---

(१) 'धोलपद' पद-विधाका ही एक प्रकारान्तर हैं।

(२) सरस्वती भंडार, कांकरोली, शुद्धाद्वैत भाषा नं० १६६ में मुखपृष्ठ पर।

-"श्री हरिराय जी ना बहू जी कृत चिन्तन नु धोण सम्पूरण समापत"।१

स्व० श्री द्वारकादास परिख ने भी इस तथ्य का समर्थन किया है।२

इन प्रमाणों के उपलब्ध होने पर भी इस पद की लेखिका के रूप में 'सुन्दरवती' का उल्लेख निश्चय ही नहीं किया जा सकता। इसके कुछ कारण हैं।

-- प्रथम तो वर्ण्य-विषय की दृष्टि से श्रृंगार के ये स्थूल चित्र किसी पुरुष - हृदय की अभिव्यक्ति की ओर ही संकेत करते हैं। यथा:--

आलिंगन चुंबन रस क्रीड़ा रास विलास थाए जी ।
कुच कठोर श्री हस्ते मीड़े अधर सुधारस पाए जी ।
क्षणएक अधर सुधारस पावें, क्षणएक अन्तर टालें जी ।
एक नें चोली चरणा थावें, एक नें आँख मिचावें जी ।
पीन पयोधर उर सौं मीड़ी, तन ना ताप नसावे जी ।।

काम क्रीड़ा का यह मांसल चित्र किसी नारी द्वारा अंकित किया गया होगा इसमें सन्देह ही है। सम्पूर्ण पद में दो सौ बीस बन्द हैं। स्वकीया तथा परकीया के साथ विविध संभोगों का इसमें वर्णन किया गया है। जैसा कि अन्यत्र स्पष्ट किया जायगा, गो० हरिराय जी की वृत्ति श्रृंगार - वर्णन में अधिक रमी है। अत: संभावना इस बात की अधिक है कि गो० हरिराय जी ने इस पद को निर्मित कर नित्यपाठ हेतु अपनी धर्म-पत्नी को दे दिया हो। हो सकता है कि स्वयं हरिराय जी ने ही इस पद में अपनी पत्नी का नाम भी समन्वित कर दिया हो, अथवा नित्यपाठी

---

(१) लाला भगवानदास जी (नाथद्वारा निवासी) के निजी संग्रह से हस्तलिखित-
--प्रति नं०- ६५ ।

(२) गो० हरिराय जी महाप्रभु नूं जीवन-चरित्र (गुजराती), — पृष्ठ-१६

वैष्णव-स्त्रियों ने बाद में यह नाम सन्निहित कर दिया हो । सन्देह के दो अन्य कारण भी हो सकते हैं :-

प्रथम--- अनेक प्राचीन हस्तलिखित प्रतियों में पद के अन्त में `पुष्पिका` में पद का रचयिता गोस्वामी हरिराय जी को ही माना है ।१

द्वितीय-- गोस्वामी हरिराय जी के काव्य में भी कुछ वर्णन, शैली तथा विषय की दृष्टि से इसी प्रकार के प्राप्त होते हैं ।

यथा :- हरें हरें जुवतिन में धसिकें, दै भुज चुंबन गाल ।
बदन उघारें, विहँसि निहारें, तिलक बनावे भाल ।
कबहुंक आलिंगन दै भाजे, आइ मिले तत्काल ।
कबहुंक ढिंग व्है अंचरा खैंचें, छुवावे नीरज नाल ।
कबहुंक आप बलैयाँ लेकें, पहिरावे बन - माल ।।२

लोक-प्रचलित साहित्य में ओ , हो, रे आदि शब्दों का प्रयोग लय-पूर्त्ति के लिए पाठकों अथवा गायकों द्वारा ही जोड़ दिया जाता है । उपरिनिर्दिष्ट पद के अन्त में भी यदि `रे` लगा दें तो इसका स्वरूप `चिन्तन के घोल` के अनुरूप ही हो जायगा ।

---

(१) `चिन्तन नु घोल` -- सरस्वती भंडार कांकरोली, बंध-४३, पुस्तक ४, लिपिकाल-१८७५, अन्त में लिखा हुआ है--`श्री हरिराय जी नां कृत` ।
-- सरस्वती भंडार कांकरोली बन्ध-२२ पुस्तक- १०, लिपिकाल सं० १८४६ पद के अन्त में लिखा है `इति श्री हरिदासोदितं चिंतन प्रकार सम्पूरणम् (हरिराय जी ने संस्कृत रचनाओं में हरिदास छाप का प्रयोग किया है)
--निजी पुस्तकालय नाथद्वारा- बंध-८ पुस्तक-२, पत्रा- २६ ।
(२) गो० हरिराय जी का पद संग्रह- (प्रकाशित) पद संख्या- ३६४ ।

वर्ण्य-विषय की दृष्टि से भी ये बन्द चिन्तन के धोल के अनुसार ही रचे गये हैं। उपर्युक्त पद के समान-भाव `चिन्तन के धोल `में पूर्व पृष्ठों में उद्धृत अंशों में देखे जा सकते हैं।

इसके अतिरिक्त गो० हरिराय जी की `छाप`` रसिक` या `रसिक शिरोमणि` १ का भी इस धोल पद में उल्लेख मिलता है।

यथा:-- त्रिवली कण्ठ कनक नी दुलरी ।
सोभा `रसिक` बिराजै जी ।।

तथा-

ललित त्रिभंगी नव-रस रंगी,
`रसिक -सिरोमनि`राधा जी ।।

चिन्तन का `धोल` की भाषा गुजराती मिश्रित हिन्दी है।दो इसके प्रमुख कारण हो सकते हैं। प्रथम - गोस्वामी हरिराय जी ने गुजराती भाषा में भी पद लिखे हैं, अत: हो सकता है उन्हीं के द्वारा नित्य-पाठ हेतु ऐसी भाषा का प्रयोग हुआ हो। दूसरी सम्भावना यह भी है कि इस हिन्दी पद का गुजराती वैष्णवों द्वारा गान करने से पद में गुजराती भाषा का प्रभाव आगया हो।

उपर्युक्त तथ्य की पुष्टि में गोस्वामी हरिराय जी की गद्य रचनाओं के भी कुछ उदाहरण देखे जासकते हैं,--

`पाछै श्री ठाकुर जी अबीर की अंधियारी करी, सो गुलाल बहुत उड्यो, पाछै श्री ठाकुर जी गोपिन के झुंड में पैठिगए, काऊ को हार तोर्यो

---

(१) कृति-परिचय नामक अध्याय में छाप सम्बन्धी तथ्य प्रस्तुत किये जारहे हैं।

काऊ के चोली के बन्द तोड़ये, काहू की भुजा मरोरी, काहू के कपोलन में चोवा को बँदा दियौं।१

इसी के अनुरूप 'चिन्तन के घोल में भी :-

'एक नैं चोली चरणा थावै, एक नैं आँख मिचावै जी'।

इन सभी आधारों से पुष्ट होता है कि चिन्तन का घोल, जिसकी लेखिका गोस्वामी हरिराय जी की धर्म-पत्नी सुन्दरवती को माना जाता है। वस्तुत: उसके रचयिता गोस्वामी हरिराय जी ही थे।

> 'चिन्तन के घोल के अतिरिक्त अन्य पद भी सुन्दरवन्ता के नाम से प्राप्त होते हैं। इससे यह भी ज्ञात होता है कि गोस्वामी हरिराय जी की धर्मपत्नी एक विदुषी नारी थी, और वह साहित्य में रुचि रखती थी। सुन्दरवती गोस्वामी हरिराय जी की ही भाँति दीर्घजीवी हुई थीं, इसलिए उन्होंने चिरकाल तक गो० हरिराय जी की सेवा की थी। इनका निधन गोस्वामी हरिराय जी से कुछ समय पहले ही हो गया था।

गोस्वामी हरिराय जी की धर्मपत्नी के नाम से अनेक 'घोलपद' मिलते हैं। इससे पुष्ट होता है कि गोस्वामी हरिराय जी का पारिवारिक वातावरण साहित्य-रस में निमग्न था। साहित्य सृष्टि की अदम्य प्रतिभा उन्हें अपने पूर्वजों से विरासत के रूप में प्राप्त हुई थी। इसका प्रभाव उनके वर्तमान सम्बन्धियों पर भी पड़ा। इनके लघु-भ्राता गोपेश्वर जी स्वयं एक

---

(१) -- होरी की भावना - गो० हरिराय जी,(प्रकाशित-) पृष्ठ- ५
-- प्रकाशन, बजरंग पुस्तकालय- मथुरा।

एक सुलझे हुए साहित्यकार थे। उन्होंने गोस्वामी हरिराय जी द्वारा रचित शिक्षापत्रों (संस्कृत) पर ब्रजभाषा टीका लिखी है। महाप्रभु वल्लभाचार्य, गुसाईं जी, गोकुल नाथ जी, कल्याणराय जी, गोकुलोत्सव जी आदि प्रसिद्ध विद्वान - साहित्यकार गोस्वामी हरिराय जी की प्रेरणा के स्रोत थे।

-:: सन्तति ::-

गोस्वामी हरिराय जी की धर्मपत्नी सुन्दरवती के चार पुत्र उत्पन्न हुए,-- गोविन्दराय जी, विट्ठलराय जी, छोटा जी एवं गोरा जी।

गोविन्दराय जी का जन्म संवत् १६७५ में, विट्ठलराय जी का जन्म संवत् १६७९ में, छोटा जी का जन्म संवत् १६८१ में तथा गोरा जी का जन्म संवत् १६८१ में हुआ था। गोविन्दराय एवं विट्ठलराय के जन्म संवत् के सम्बन्ध में सभी स्थलों पर मतैक्य है, किन्तु गोरा जी एवं छोटा जी के जन्म संवतों के विषय में क्वचित् मतभेद भी दृष्टि-गत होता है। वल्लभ वंश वृक्ष में गोरा जी का जन्म संवत् १६८१ तथा छोटा जी का जन्म संवत् १६८२ माना है[१]। किन्तु इसके विपरीत काव्य कल्पद्रुम में छोटा जी का जन्म संवत् १६८१ तथा गोरा जी का जन्म संवत् १६८२ माना है[२]।

---

(१) श्री वल्लभ वंश वृक्ष सम्पा० श्री व्रजभूषण शर्मा, कांकरौली, द्वितीय। १गृह

(२) प्रगटे फिर हरिराय गृह छोटा जू सुखकंद ।
कृष्ण अषाढ़ी तीज कौं भू दिगीस रस चंद ।
प्रगटे फिर हरिराय गृह गोरा जू कुल चंद ।
शुक्ल अषाढ़ी प्रतिपदहि नैनदिगीस रस चंद ।।

-- सम्प्रदाय कल्पद्रुम-- श्री विट्ठल भट्ट, लक्ष्मी वेंकटेश्वर प्रेस, बम्बई - पृष्ठ- ११७

इन दोनों मतों में 'सम्प्रदाय - कल्पद्रुम' का मत अधिक समीचीन प्रतीत होता है, क्योंकि सम्प्रदाय - कल्पद्रुम के रचयिता विट्ठलनाथ भट्ट स्वयं गोस्वामी हरिराय जी के शिष्य थे। इसका इन्होंने अपने ग्रन्थ 'सम्प्रदाय-कल्पद्रुम' में भी उल्लेख किया है।१ इससे सिद्ध होता है कि विट्ठलनाथ भट्ट गो० हरिराय जी के समकालीन थे, और उनके सन्निकट में भी रहते थे। अत: उनका तथ्य अधिक माननीय है। हो सकता है कि 'वल्लभ वंश वृक्ष' के सम्पादन में छोटा जी एवं गोरा जी के जन्म सम्बन्धों में क्रमागत संख्या होने से प्रेस-सम्बन्धी त्रुटि रह गई हो।

शाह हिम्मत लाल भोगीलाल ने गो० हरिराय जी के चार पुत्रों के नाम इस प्रकार दिए हैं-- 'श्री गोविन्दराय जी, श्री विट्ठलराय, गोरा-जी एवं श्री गोकुलनाथ जी'।२ इन्होंने छोटा जी के स्थान पर गोकुलनाथ जी का उल्लेख किया है। किन्तु यह नाम अन्यत्र कहीं नहीं मिलता। अत: यह उल्लेख ध्यान देने योग्य नहीं है।

गोस्वामी हरिराय जी के चारों पुत्र असमय में ही काल-कवलित होगये, इनके वंश की मूल शाखा का यहीं पर अवसान होगया। आगे चल-कर इनकी धर्मपत्नी सुन्दरवती ने सम्प्रदाय की दत्तक-पुत्र व्यवस्था के अनुसार प्रथम-गृह के तत्कालीन आचार्य (तिलकायत) दामोदर जी (सं० १७११) के द्वितीय पुत्र गिरधर जी को गोद ले लिया।

---

(१) श्रवण सुन्यो हरिराय मुख, करण लिख्यो नृपमान।

-- सम्प्र० कल्प० पृष्ठ- १८०

(२) श्री हरिराय जी महाप्रभु जी नूं जीवन-चरित्र'- प्रका० सांवली (भाग-१।२) पृष्ठ - २७

गोस्वामी हरिराय जी की वंश परम्परा में अब-तक दत्तक-पुत्रों का विधान अपनाया जाता रहा है। सम्प्रति उनके वंश की शाखाएँ इन्दौर, नाथद्वारा तथा बड़ौदा में हैं।

::-:: निवास ::-::

गोस्वामी हरिराय जी की आयु का दीर्घकाल व्रज में ही व्यतीत हुआ था। उनका जीवन - प्रभात गोकुल ग्राम में प्रकाशित हुआ था। वहीं पर उनके यज्ञोपवीत, विवाह आदि संस्कार सम्पन्न हुए थे. यहीं पर उन्होंने अधिकांश साहित्य का सृजन किया. सम्प्रदाय के अनेकानेक संस्कृत ग्रन्थों का निर्माण उन्होंने गोकुल में ही किया था।

गोस्वामी गोकुलनाथ जी के साथ उनका बहुत समय व्यतीत हुआ था। गोकुलनाथ जी की 'माला-प्रसंग' घटना के समय उनकी आयु तीस वर्ष की थी। इस प्रकार गो० गोकुलनाथ जी की कुछ प्रत्यक्ष-दर्शी घटनाओं से ये अत्यधिक प्रभावित रहे थे। इसलिए गो० गोकुल नाथ जी के व्यक्तित्व के आकर्षण ने उन्हें उनका तन-मन से अनुगामी तथा श्रद्धालु बना दिया था। गो० गोकुल नाथ जी का परलोक-वास संवत् १६९७ में हुआ था, अत: गो० हरिराय जी की आयु के पचास वर्ष गो० गोकुलनाथ जी के सानिध्य में ही व्यतीत हुए थे।

जैसा कि पूर्वपृष्ठों में स्पष्ट किया जा चुका है, गो० गोकुलनाथ जी हरिराय जी के दीक्षा गुरू थे, अपने गुरु के सन्निकट गोकुल में ही रह कर उन्होंने सत्य की अनवरत शोध की। जो उनकी कृतियों से ज्ञात होता है।

जब सं० १७२६ में औरंगजेब ने गोकुल और गिरिराज में उपद्रव किया, तब अधिकांश गोस्वामी परिवार- अपने सेव्य स्वरूपों सहित व्रज छोड़कर अन्यत्र चले गए थे। वल्लभ-सम्प्रदाय के मुख्य सेव्य-स्वरूप

'श्रीनाथ जी' भी संवत् १७२६ में व्रज से बाहर ले जाए गए थे ।१ कुछ विद्वानों के अनुसार गोस्वामी हरिराय जी भी इसी देव प्रतिमा के साथ ही अन्य गोस्वामियों के साथ व्रज छोड़ गए थे । २ किन्तु इस प्रकार की संभावना प्रतीत नहीं होती, क्योंकि प्रथम तो गोस्वामी हरिराय जी ने स्वयं 'श्रीनाथ जी की प्राकट्य वार्त्ता' में 'श्रीनाथ जी के स्वरूप' की समस्त उस यात्रा का वर्णन किया है जो व्रज से मेवाड़ तक सम्पन्न हुई थी, किन्तु इस विस्तृत यात्रा वर्णन में गोस्वामी हरिराय जी ने कहीं भी अपनी उपस्थिति का आभास नहीं दिया । उन्होंने इस यात्रा में 'श्री गोविन्द जी' श्री बालकृष्ण जी' और 'श्री वल्लभ जी' गोस्वामी आचार्यों का ही उल्लेख किया है । साथ में गंगाबाई, की भी चर्चा है ।३ इसके अतिरिक्त यात्रा के मध्य में व्रजराय जी, दाऊजी आदि आचार्यों का भी वर्णन है, किन्तु गोस्वामी हरिराय जी ने स्वयं अपना उल्लेख कहीं भी नहीं किया । द्वितीय,-- 'श्रीनाथ जी' का देव -विग्रह 'सिंहाड़-ग्राम में संवत् १७२८ में पहुँचा था ।४ किन्तु गोस्वामी हरिराय जी इससे भी पहिले वहाँ पहुँच गए थे ।५ यह तथ्य गोस्वामी हरिराय जी के वर्तमान वंशानुयायियों से

---

(१) 'मिती आसोज सुदी १५ शुक्रवार संवत् १७२६ के पाछिली पहर रात्रि कों श्री वल्लभ महाराज पना सिद्ध कराए और आरोगाए पाछें रथ हांक्यो'-
--श्रीनाथ जी की प्राकट्य वार्त्ता -- गो० हरिराय जी - संस्करण-
-- सं० २०२५(नाथद्वारा-)पृ० ५२

(२) 'अष्टछाप परिचय' श्री प्रभुदयाल मीतल - पृ० ८१

-- अष्टछाप व वल्लभ सम्प्रदाय (भाग-त), डा० दीनदयालु गुप्त पृष्ठ- ८०

-- हिन्दी साहित्य-- सम्पादक- धीरेन्द्र वर्मा- द्वितीय-खण्ड-३८४

(३) श्रीनाथ जी की प्राकट्य वार्त्ता- गो० हरिराय जी- पृष्ठ- ५२

(४) वही, -- पृष्ठ- ७६

(५) 'श्रीनाथ जी के आने से पूर्व ही द्वितीय पीठ से ठाकुर जी श्रीविट्ठलनाथ जी का भी खमनौर (मेवाड़) में आना होगया था ।-- इस समय यहाँ के तिलकायत श्री हरिराय जी महानुभाव थे'।

- कांकरोली का इतिहास- ले०पो०कंठमणि शास्त्री-पृ० १४८

भी ज्ञात हुआ है। इसके अतिरिक्त वल्लभ सम्प्रदाय के अन्य विद्वान-आचार्य भी इस तथ्य को पुष्ट करते हैं।१ इस प्रकार यदि गोस्वामी हरिराय जी 'श्रीनाथ जी' के विग्रह के साथ यात्रा कर रहे थे, तो उन्हें रास्ते में ही कहीं छोड़कर अकेले आगे नहीं बढ़ सकते थे, यदि वे इस यात्रा में सम्मिलित थे, तो उनके साथ ही सिंहाड़ यात्रा तक भी आते, किन्तु सम्भावना यह की जाती है कि गोस्वामी हरिराय जी ने 'श्रीनाथ जी' की देवमूर्ति के व्रज से चले जाते के कुछ समय पश्चात् यहाँ से प्रस्थान किया, और श्रीनाथ जी के मेवाड़ पहुंचने से पूर्व ही वे खिमनौर पहुंच गये थे। 'श्रीनाथ जी' की यात्रा विस्तृत थी तथा उसमें विश्राम भी अनेक थे, किन्तु गोस्वामी हरिराय जी की यात्रा में इस प्रकार का विस्तार न था। वल्लभ-सम्प्रदाय के वर्तमान आचार्यों द्वारा इस कथन की पुष्टि होती है।

इस प्रकार गोस्वामी हरिराय जी ने अपनी आयु के अस्सी वर्ष व्रजभूमि में ही व्यतीत किए थे।

व्रज-निवास की अवधि में इन्होंने समय-समय पर पर्यटन भी किए थे। यात्रा करने की यह परम्परा महाप्रभु वल्लभाचार्य से ही चली आरही है। उन यात्राओं के

-:: पर्यटन ::-

दो प्रमुख उद्देश्य हुआ करते थे। प्रथम तो ये विद्वान आचार्य अपने विद्वतापूर्ण प्रवचनों से जन-साधारण को प्रभावित कर अपने सम्प्रदाय में 'दीक्षित' होने के लिए आकर्षित करते थे। अन्य लक्ष्य यह भी रहता था कि इस विधा से उनकी वैयक्तिक प्रतिष्ठा का लोक-प्रांगण में प्रचार होता था। इससे वे सम्मानित होते थे तथा उनके लौकिक जीवन निर्वाह हेतु धनार्जन भी होता रहता था।

---

(१) तृतीय पीठाधिपति गो० श्री व्रजभूषण लाल जी महाराज, कांकरोली। --तथा विट्ठलनाथ जी का मन्दिर, गो० हरिराय जी की बैठक, नाथद्वारा से ज्ञातव्य।

गोस्वामी विट्ठलनाथ जी के समय से ही सम्प्रदाय के भावुक वैष्णवों में यह मान्यता निरंतर चली आरही है कि ये गोस्वामी आचार्य जो महाप्रभु वल्लभाचार्य की वंश परम्परा में हैं, साक्षात् भगवान् कृष्ण के अवतार ही हैं। इसी भाव-दृष्टि से अधरामृत, चरणस्पर्श, द्रव्य-भेट, केशर स्नान, दर्शन, पधरावनी आदि क्रियाएँ भगवत-तुल्य देखी जासकती हैं। यह स्थिति सम्प्रति भी देखी जासकती है। इसी भावात्मक वृत्ति के अनुरूप जब कोई भी वल्लभ-वंशज आचार्य या बालक अपने मतानुयायियों के घर जाता है तो सभी मतानुयायी उसका देव-तुल्य स्वागत करते हैं। आचार्य-वर्ग भी अपने सम्मान-वर्द्धन हेतु तथा सम्प्रदाय के सिद्धान्तों के मनन हेतु प्रारम्भ से ही गूढ़ अध्ययन में रुचि लेते आए हैं। वे अपनी विद्वता का यथा-स्थल प्रदर्शन भी करते आए हैं। उनके वे सभी प्रवचन जो किसी विशेष-भक्त-मंडली के समक्ष उच्चरित होते हैं, सम्प्रदाय में 'बचनामृत' के नाम से जाने जाते हैं।

इस प्रकार इन आचार्यों में देशाटन के प्रति आकर्षण बना रहता है। गोस्वामी हरिराय जी गो० गोकुलनाथ जी के साहचर्य्य तथा अपनी प्रखर-विद्वत्ता के कारण इस सम्प्रदाय में शीघ्र ही सम्मान - के सोपान पर चढ़ गये थे। सम्प्रदाय की सैद्धान्तिक-मान्यताओं के प्रसारण-हेतु उन्होंने भी अनेक यात्राएँ की थीं।

उल्लेख मिलता है कि एक बार गोस्वामी हरिराय जी मेवाड़ के 'सिंहाड़' ग्राम में ठहरे हुए थे (सम्प्रति इस स्थान को नाथद्वारा कहा जाता है, यहीं पर श्रीनाथ जी की भव्य - देव-प्रतिमा प्रतिष्ठित है) यहाँ से उदयपुर का फासला अधिक नहीं है। गोस्वामी हरिराय जी के उदयपुर के राणा रायसिंह के साथ अच्छे सम्बन्ध थे। अत: राणा रायसिंह स्वयं 'सिंहाड़' में

गोस्वामी हरिराय जी के 'सुबोधिनी' ग्रन्थ पर प्रवचन सुनने आया करते थे। इस आशय का एक चित्र श्री विट्ठलनाथ जी के मन्दिर, नाथद्वारा में विद्यमान है। इसमें राणा रायसिंह हाथ जोड़कर गोस्वामी हरिराय जी के सन्मुख बैठे हुए हैं।

सम्प्रदायगत :-

-+- विभिन्न-+
बैठकें

-

यात्राकाल में ये आचार्य जिस स्थान पर रुककर प्रवचन आदि किया करते थे, वह स्थान उनकी बैठक के रूप में प्रसिद्ध हो जाया करता था। महाप्रभु जी की चौरासी बैठकें, गुसाईं जी की अट्ठाईस बैठकें, गोकुलनाथ जी की तेरह बैठकें[१] अब भी पूर्ण सम्मान के साथ यत्र - तत्र सुरक्षित हैं। गोस्वामी हरिराय जी की भी सात बैठकें प्रसिद्ध हैं। जिनका परिचय यहाँ दिया जाता है।

गो० हरिराय जी की यह बैठक गोकुल गाँव में विट्ठलनाथ जी के मन्दिर में है। यहाँ आप नित्य-प्रति प्रवचन आदि किया करते थे। अपने प्रमुख शिष्य हरिजीवन दास से यहीं पर रहस्य वार्त्ताएँ हुआ करती थीं। प्रथम 'निरोध लक्षण' ग्रन्थ(संस्कृत) की टीका आपने यहीं बैठकर की थी, यहाँ पर उन्होंने श्रीमद् भागवत के सप्ताह परायण भी किए थे।[२] अस्सी

गो
कु
ल --
- - - -

---

(१) श्री आचार्य महाप्रभु जी की चौरासी बैठक-
-- गोवर्द्धन ग्रन्थ माला, मथुरा पृष्ठ- २३०

(२) वही --- ।

वर्ष की आयु तक ये गोकुल में ही रहा करते थे ।

-:: नाथद्वारा::-

मेवाड़ राज्य के सिंहाड़ ग्राम में, जो अब 'नाथद्वारा' नाम से जाना जाता है, विट्ठलनाथ जी के मन्दिर में इनकी बैठक है । अपनी वृद्धावस्था में ये प्राय: यहाँ आया करते थे । एक समय हर जीवन दास शिष्य के पूछने पर उन्होंने 'वेणुगीत' का तीन दिन तथा तीन रात्रि पर्यन्त लगातार व्याख्यान किया था ।१ इनके सेव्य-स्वरूप विट्ठलनाथ जी की मूर्ति यहाँ सम्प्रति भी विद्यमान है ।

-::खिमनौर::-

सिहाड़ ग्राम के निकट यह ग्राम स्थित है । गोस्वामी हरिराय जी के सान्ध्य-जीवन का अधिकांश समय यहीं व्यतीत हुआ था । व्रज से निकल कर गोस्वामी हरिराय जी सर्व प्रथम यहीं पर आये थे । तत्कालीन राणारायसिंह ने उनके ठहरने की यहाँ उचित व्यवस्था की थी, तथा उन्हें उपयोग हेतु पर्याप्त भूमि भी प्रदान की थी । यहीं से ये प्राय: श्रीनाथ जी की सेवा हेतु नाथद्वारा जाया करते थे । समय-समय पर वहाँ के तिलकायत आचार्य को सेवा की त्रुटियों से भी ये अवगत कराया करते थे ।

-::जैसलमेर::-

यह गाँव राजस्थान में है । यहाँ पर गिरधारी जी के मन्दिर में इनकी बैठक है । 'गिरधारी जी' उनके पिता कल्याणराय जी के सेव्य-स्वरूप थे । यहाँ जैसलमेर के राजा को उन्होंने दीक्षा देकर शिष्य बनाया था ।२

---

(१) श्री आचार्य महाप्रभु जी की चौरासी बैठक,
--गोवर्धन ग्रन्थमाला, मथुरा पृष्ठ-२३१

(२) वही, --- पृष्ठ-२३२

-:: डाँकोर ::-

गुजरात में ये गाँव डाँकोर जी के नाम से एक तीर्थ-स्थल के रूप में प्रसिद्ध है। यहाँ गोमती जलाशय के किनारे कुछ ऊँचाई पर उनकी बैठक बनी हुई है, यहीं पर उन्होंने रंछोरलाल जी का मन्दिर भी बनवाया था, जिसमें एक सेढ़ाबाल-ब्राह्मण को सेवा-हेतु नियुक्त किया था। यह मन्दिर गाँव का प्रसिद्ध मन्दिर है।१

-:: सावली ::-

गुजरात राज्य में ही सावली गाँव में उनकी बैठक है। तालाब के पास में यह बैठक विशाल मन्दिर के रूप में प्रख्यात है। इस बैठक के कारण ही यह गाँव भी वल्लभ-सम्प्रदायी वैष्णवों का तीर्थ स्थान बना हुआ है। इस मन्दिर का भव्य-निर्माण हुआ है। इस समय इस नव-निर्मित विशाल मन्दिर में गोस्वामी हरिराय के हस्ताक्षरों की पूजा होती है। गो० हरिराय जी का कुछ साहित्य भी यहाँ से प्रकाशित होता रहता है।

-:: जम्बूसर ::-

जम्बूसर गाँव में भी इनकी एक बैठक तालाब के किनारे है। यहाँ पर उनके अनन्य सेवक प्रेम जी भाई ने 'युगल गीत' का प्रसंग पूछा था, जिसका समाचार उन्होंने तीन पहर पर्यंत किया था, यहीं से आप नाथद्वारा आये थे।२ इस समय इस बैठक की व्यवस्था ठीक न होने से यह जीर्ण प्राय: ही है। सम्भवत: उनके वंशानुयायियों का इस ओर ध्यान नहीं रहा।

इन सात बैठक-स्थानों के अतिरिक्त गुजरात, उत्तरप्रदेश, राजस्थान आदि प्रान्तों में उन्होंने और भी यात्रायें की थीं, जिनके प्रसंग यत्र-तत्र बचनामृतों

---

(१) श्री आचार्य जी महाप्रभु जी की चौरासी बैठक-
-- बजरंग पुस्तकालय, मथुरा। पृष्ठ- २३५

(२) वही।

में बिखरे पड़े हैं। इन विविध यात्राओं के कारण वे समग्र भारत वर्ष में प्रख्यात होगये थे। उनके ग्रन्थों की प्रतिलिपियां व्रज प्रदेश से डेरा गाजी खाँ (पाकिस्तान) तक प्राप्त हुई हैं। हस्तलिखित प्राचीन ग्रन्थों के अधिकांश संग्रहालयों में उनकी कुछ न कुछ रचनाएँ प्राय: मिल जाती हैं। लेखक को उनके ग्रन्थ मथुरा, बृन्दावन, नन्दगाँव, बरसाना, कोटा, जयपुर, उदयपुर, बड़ौदा, बम्बई, नाथद्वारा, कांकरौली, काशी, आदि स्थलों से विविध सूत्रों से प्राप्त हुए हैं। स्पष्ट है कि उनकी ख्याति में उनके देशाटन का पर्याप्त स्थान रहा है।

व्यक्तित्व :-

गो० हरिराय जी अपने समय के सर्व-प्रसिद्ध विद्वान थे। उनके वर्तमान परिकर में ऐसा सुयोग्य विद्वान दूसरा दृष्टिगत नहीं होता। वे स्वरूप से सुन्दर तथा स्वभाव में अत्यन्त मृदु थे। उनमें अध्ययनगत गरिमा भी थी, और अनुभवगत गम्भीरता भी। बड़े-बड़े राजाओं से लेकर मजदूर-वर्ग भी इनसे प्रभावित था। ये वैष्णव वृन्दों में जितने आदरणीय थे उतने ही सम्माननीय अपने पारिवारिक सदस्यों में भी थे। दूर-दूर से गोस्वा-मियों के जिज्ञासु बालक उनके पास आया करते थे। अपनी पत्नी तथा भाई के लिये भी वे पूज्य थे और उन्होंने आजीवन इस सम्मान का निर्वाह किया था। पूर्ण वैभव सम्पन्न होने पर भी अत्यन्त सरल-जीवन यापन करते थे। वे अपना अधिक समय भगवत् सेवा या ग्रन्थ-सृजन में लगाया करते थे। भगवत् वार्तायें उनके दैनिक जीवन का नियम थीं। वे कभी आपत्तियों से घबड़ाए नहीं, और नाहीं वैभव पाकर प्रमत्त ही हुए। औरंगजेब के उपद्रवों से जब सभी आचार्यगण अपने देव-विग्रहों सहित व्रज से चले गये थे, तब आपने बड़े ही धैर्य के साथ "दैव-आज्ञा" की प्रतीक्षा की थी। इन्हें न तो किसी से प्रतिस्पर्धा थी और ना ही अपनी विद्वता

का अभिमान । इन सभी विशेषताओं से युक्त गो० हरिराय जी एक प्रभावशाली व्यक्तित्व के धनी थे । इनके व्यक्तित्व के विभिन्न पहलुओं की चर्चा हम निम्नलिखित शीर्षकों के अन्तर्गत करना समीचीन समझते हैं ।-

(- आचार्य -)
(- - -)
(- रूप -)

वल्लभ-सम्प्रदाय की कुल-रीति के अनुसार वंश का सबसे बड़ा पुत्र पिता की गद्दी का अधिकारी हुआ करता है । गोस्वामी हरिराय जी के पिता कल्याणराय जी अपने भाइयों में सबसे बड़े थे, अतएव वे गद्दी के आचार्य पद पर प्रतिष्ठित थे । यह गुसाईं जी के द्वितीय पुत्र श्री गोविन्दराय जी की गद्दी है । इसे द्वितीय-गृह के नाम से भी जाना जाता है । गो० हरिराय जी कल्याण राय जी के ज्येष्ठ पुत्र थे, इसलिए उनके पश्चात् ये ही इस गद्दी पर आचार्य हुए थे । इस गद्दी के अनुयायियों की संख्या अन्य गद्दियों की भाँति पर्याप्त है । बहुसंख्यक धनी-मानी व्यक्ति इस गद्दी के सेवक हैं ।

-:: सरलता ::-

गोस्वामी हरिराय जी में एक गद्दी के आचार्य होने के सभी गुण विद्यमान थे। स्वभाव से ये अत्यन्त मृदु होने के कारण वैष्णव-वृन्द इनसे अत्यधिक प्रभावित था । ये प्राय: वैष्णवों के मध्य प्रवचन किया करते थे । अपनी भाव-विभोरता के लिये ये प्रसिद्ध थे ।

> एक समय 'खिमनौर-काल' में ही इनकी नित्य-वार्ता सुनकर वैष्णव अत्यधिक भाव-विभोर हो उठे थे । रात्रि में वार्ता-समापन के पश्चात् ये वैष्णव कीर्तन-गान करते हुए मंडली रूप में मन्दिर से निकले । वैष्णवों के कीर्तन-गान से कुछ जैन-धर्मावलम्बियों को रात्रि में कष्ट का अनुभव हुआ । एक मुहल्ले के चबूतरे पर बैठकर ये सभी वैष्णव भगवत् भजन करने लगे । उक्त जैनियों ने आकर श्री हरिराय जी से कहा कि आपके

अनुयायी इस प्रकार हमारी निद्रा में विघ्न डाल रहे हैं। गो० हरिराय जी उन जैन-व्यक्तियों के साथ निर्दिष्ट स्थल पर आये और जब उन्होंने देखा कि उनके सेवक इस प्रकार भगवत -स्मरण में लीन हैं तो स्वयं भी उनका साथ देने लगे। गो० हरिराय जी को आभास हुआ कि स्वयं कृष्ण भी उनके सत्संग में क्रीड़ारत हैं। इससे आप और भी भाव-विभोर हो उठे। साथ आए हुए जैनियों ने जब एक गद्दी के प्रतिष्ठित आचार्य को इस प्रकार उनका साथ देते हुए देखा तो वे भी उनसे अत्यधिक प्रभावित हो उठे। गो० हरिराय जी ने तत्क्षण ही एक पद रचकर वहाँ गाया भी।१

कीर्त्तन-समाप्त होने पर उक्त जैनियों ने गो० हरिराय जी से निवेदन किया कि उन्हें भी अपने सम्प्रदाय में सम्मिलित कर लें। गो० हरिराय जी ने उन्हें अष्टाक्षर मंत्र सुनाकर अपने सम्प्रदाय में समाविष्ट कर लिया। उन्हें अपना एक पद सुनाकर जीवन के प्रति कर्त्तव्य का ज्ञान भी कराया। २

---

(१) हौं वारी इन बल्लभियन पर।
मेरे तन को करौं बिछौना, शीश धरूँ इनके चरनन तर।
नेह भरे देखो मेरी अँखियन, मंडल मध्य विराजत गिरधर।
यह तौ मोहि प्राण-जीवन धन, दान दिये हैं श्री वल्लभवर।
पुष्टि-प्रकार प्रगट करिवे कौं फिर प्रगटे श्री वल्लभ वपुधर।
'रसिक' सदा आस इनकी कर, वल्लभियन के चरनन अनुसर।
-- गो० हरिराय जी का पद साहित्य(प्रकाशित) पद नं० ६४१

(२) जीवन जो ऐसे बनि आवै।
श्री वल्लभ श्री विट्ठल प्रभु की शरणागति जो पावै।
द्वादस तिलक सहित मुद्राधर, तुलसी कंठ धरावै।
प्रेम सहित जो नन्द-नंदन के जन्म-कर्म गुण गावै।
- - - - - - - - - ।
-- वही ० ।

उक्त उदाहरण से गोस्वामी हरिराय जी के व्यवहार की सरलता का बोध होता है । वह एक प्रतिष्ठित गद्दी के आचार्य होने पर भी व्यवहार में बहुत सीधे-सादे व सरल थे। इसके अतिरिक्त अपनी पद प्रतिष्ठा के अनुरूप स्वभावत: इनमें अध्ययनगत-गाम्भीर्य भी विद्यमान था । गो० गोकुल नाथ जी के निर्देशन में, इनमें जो विद्वता प्रस्फुटित हुई, उसकी आभा सर्वत्र देदीप्यमान रही । इन्होंने सम्प्रदाय सम्बन्धी सभी ग्रन्थों का पूर्ण अध्ययन किया था । इनके समय की सभी गद्दियों के आचार्य इनका आदर करते थे ।

अध्ययन-गत गरिमा इनके प्रवचनों में दिखाई देती थी । अपने आचार्य-धर्म के अनुरूप ये नित्य-प्रति उपदेश दिया करते थे जो लिपिबद्ध रूप में 'बचनामृत' नाम से प्रसिद्ध हैं ।

-:: सम्प्रदाय के प्रति::-

आचार्य होने के कारण इन्हें अपने धर्म- सम्प्रदाय के प्रसारण का सदैव ध्यान रहता था । एक समय गो० गोकुलनाथ जी ने परमानन्द नामक स्वर्णकार से श्रीनाथ जी की मूर्त्ति के लिये एक जड़ाऊ कूल्हा (पगड़ी सम्बन्धी एक विशेष आभूषण) बनाकर लाने के लिए कहा । यह स्वर्णकार गोस्वामी हरिराय जी का शिष्य था । जिस समय वह उक्त आभूषण बनाकर लाया गोकुल नाथ जी बाहर गये हुए थे । इसलिए वह स्वर्णकार उस आभूषण को गोस्वामी हरिराय जी के पास लाया तथा उनसे पूछा कि यह आभूषण कैसा बना है ? गोस्वामी हरिराय जी उसे देखकर सन्तुष्ट हुए और कहा कि इसे देखकर गोकुलनाथ जी तथा श्रीनाथ जी दोनों प्रसन्न होंगे । स्वर्णकार के वापस जाते समय गो० हरिराय जी ने उससे कहा कि जब गोकुलनाथ जी तुझे पारिश्रमिक-द्रव्य दें तो तू द्रव्य मत लेना, बल्कि उनसे बचन लेलेना कि पुष्टि-मार्ग की पचास वर्ष तक विशेष स्थिति रहे । तेरा पारिश्रमिक मैं दे दूंगा । गो० हरिराय जी की आज्ञा के अनुरूप वह स्वर्णकार गोकुलनाथ जी के पास गोकुल गया, और

वह आभूषण उन्हें दिखलाया, गो० गोकुलनाथ जी उस आभूषण को देखकर अति प्रसन्न हुए। उन्होंने इस आभूषण को दूसरे ही दिन अपने जन्म दिवस पर श्रीनाथ जी के स्वरूप में सजाया। अपने सेव्य-स्वरूप की ललित झाँकी देखकर वे अत्यन्त प्रसन्न हुए थे। बाद में गोकुलनाथ जी ने उस स्वर्णकार से पारिश्रमिक हेतु पूछा, इस पर स्वर्णकार ने द्रव्य के बदले 'मार्ग की पचास वर्ष तक विशेष स्थिति' का आशीष माँगा। स्वर्णकार की इस अद्भुत माँग को सुनकर गोकुलनाथ जी स्तब्ध रह गये। उन्हें संदेह हुआ कि ऐसी विचित्र माँग इस स्वर्णकार की नहीं हो सकती, बाद में उन्हें गोस्वामी हरिराय जी के कृत्य का पता चला।

इस प्रसंग से ज्ञात होता है कि गोस्वामी हरिराय जी अपने गुरु गोकुलनाथ जी का बहुत सम्मान करते थे, वे गोकुल नाथजी से आशीष के रूप में स्वार्थ-सिद्धि नहीं चाहते थे, बल्कि अपने सम्प्रदाय की विशेष उन्नति के लिये ही अपने गुरु की शुभ-कामनाओं की इच्छा करते थे।

-:: भक्त-हृदय ::-

आचार्य होने के नाते वे कृष्ण के अनन्यतम् भक्त थे, कृष्ण की विविध लीलाओं को ही उन्होंने अपने साहित्य का वर्ण्य-विषय बनाया है। बिना भगवत् आज्ञा के वे व्रज छोड़ने के लिये तैयार न थे। श्रीनाथ जी के स्वरूप की सेवा के लिये सिमनौर से नाथद्वारा नित्य आया करते थे। उन्हें भगवत् आज्ञा का समय-समय पर आभास हुआ करता था। भगवान् की स्वप्न-आज्ञा को वे सदैव ही सत्य मानते थे।

-संयमी-

अपने पद की मर्यादा के अनुसार गोस्वामी हरिराय जी में संयम भी पूर्ण रूप से विद्यमान था। अपने आचरण से पूर्ण संयमी होने के कारण अपने समय के परिकर में गो० हरिराय जी एक उदाहरण बने हुए थे।

प्रसंग है कि एक समय खिमनौर में गोस्वामी हरिराय जी के प्रवचन सुनने एक राजकुमारी आया करती थी। गो० हरिराय जी शयन की झाँकी के पश्चात् वैष्णवों के आगे भगवत् वार्ता किया करते थे। उनकी वार्ता बहुत सरल व सरस हुआ करती थीं। उन रसमयी वार्ताओं को सुनकर राजकुमारी का मन गोस्वामी हरिराय जी के प्रति आकृष्ट हुआ गोस्वामी हरिराय जी में दिव्य तेज के साथ-साथ लौकिक सौन्दर्य भी पूर्ण-रूपेण विद्यमान था। राजकुमारी के वासनामय अंतस् में गो० हरिराय जी के प्रति कुछ कलुषित विचार उत्पन्न हुए, राजकुमारी ने गो० हरिराय जी के प्रति भाव-विभोरता प्रगट करते हुए स्वेच्छा परिपूर्ति का भी दृढ़ निश्चय कर लिया था। गोस्वामी हरिराय जी के प्रति आसक्त उस राजकुमारी ने अपनी सेविका द्वारा गो० हरिराय जी से एकान्त में चरण-स्पर्श की प्रार्थना की। एकान्त प्राप्त कर राजकुमारी ने चरण-स्पर्श के माध्यम से अपनी कलुषित भाव-भंगिमाओं को भी प्रदर्शित करने का यत्न किया, किन्तु संयम, त्याग एवं भगवत् भाव की निरन्तर स्थिति के कारण गो० हरिराय जी में दीर्घ-जीवन के अनुभवों की दूर-दर्शिता विद्यमान थी। वे लौकिक वातावरण से इन सभी छल-छन्दों से परिचित थे, उस समय उन्होंने राजकुमारी के उस तामसिक विकार के उन्मूलन का निश्चय किया।

> वल्लभ-सम्प्रदाय के जन-विश्वास और प्रचलित कथा-श्रुतियों के अनुसार जिस समय राजकुमारी ने उनके चरण-स्पर्श किए, गो० हरिराय जी अपनी दिव्य शक्ति के कारण वात्सल्य-भाव के अनुरूप माँ यशोदा के रूप में परिणित होगए। राजकुमारी को आभास हुआ कि भगवान् कृष्ण यशोदा के स्तनों का पान कर रहे हैं। उस अलौकिक दृष्टि के प्रभाव से राजकुमारी का हृदय विकार-मुक्त होगया। वह वात्सल्य के चरमोद्वेग के वशीभूत हो मूर्च्छित होगई। चैतन्य होने पर गो० हरिराय जी ने उन्हें बताया कि इस तरह एकान्त में उनका आना

लोक-विरुद्ध है। प्राणी को लोक-मर्यादा से विमुख नहीं होना चाहिये। भक्ति के विधान में काम की सन्निहिति असंतुलन प्रकट करती है, अत: इस सन्दर्भ में आत्मिक कालुष्य का परित्याग करना चाहिये। अपने इस मत की पुष्टि में उन्होंने संस्कृत में 'कामाख्य दोष विवरणम्' नामक ग्रन्थ की रचना की।१ उसका अर्थ राजकुमारी को समझाया, राजकुमारी ने उस प्रसंग का एक भाव-चित्र अपने हाथ से बनाया।२ उसी चित्र का स्मरण करती हुई, कुछ दिन पश्चात् मृत्यु को प्राप्त हुई।३

इस घटना से स्पष्ट है कि गोस्वामी हरिराय जी लोक - मर्यादा का सदैव ध्यान रखते थे तथा नैतिक आचरण की शुद्धता के प्रति सदैव जागरूक रहते थे। आचार्य-पद की गरिमा का उन्हें सदैव स्मरण रहता था, तथा इसके अनुरूप ही वे आचरण करते थे। गो० हरिराय जी भलीभाँति जानते थे कि उनका जन्म आचार्य-वल्लभ तथा गुसाईं विट्ठलनाथ जी के लोक-विश्रुत वंश में हुआ है। वे अपने कर्त्तव्यों के प्रति सदैव सचेष्ट रहते थे।

गो० हरिराय जी अपने समय के सर्व प्रसिद्ध व्यक्ति थे। तत्कालीन वैष्णव समाज में उनका पर्याप्त सम्मान था, -::)उपाधि(::- गुसाईं जी के लिये प्रयुक्त होने वाली 'प्रभुचरण' की उपाधि से वे अलंकृत थे। गुसाईं जी के प्रसाद-स्वरूप जन्म लेने के कारण ही सम्भवत: गोस्वामी हरिराय जी को भी 'प्रभुचरण' की उपाधि प्राप्त हुई थी। दामोदर दास झालानी एवं गोपाल दास झालानी के अनुसार

---

(३) गो० हरिराय जी नूं जीवन चरित्र (गुजराती)- द्वारकादास परिख-पृ० ४०

(२) यह चित्र गोकुल तथा कांकरोली में उपलब्ध है। यह चित्र श्री विट्ठलेश चरितामृत में छप चुका है।

(१) विद्याविभाग, नाथद्वारा से संवत् १९८० में प्रकाशित।

'आप श्री (हरिराय) प्रभु चरण (गुसाईं जी के चर्वित ताम्बूल स्वरूप होने से) के नाम से सम्बोधित किये जाते थे' ।१ वैसे स्वरूप और कर्म की दृष्टि से भी आप गुसाईं जी के प्रति रूप ही थे । बाल्यकाल से ही उनमें सेवा, श्रृंगार, भक्ति, व्यवहार, विद्वता आदि के प्रति गुसाईं जी की भाँति रुचि थी । साम्प्रदायिक सेवा-भावना, कर्म-ज्ञान, व्यवहार, मर्यादा, शिष्टाचार आदि के बीज उनमें शिशु-काल से ही विद्यमान थे ।

गोस्वामी हरिराय जी अपनी प्रौढ़ावस्था में महाप्रभु वल्लभाचार्य के अनुरूप भगवत्प्रेम, विरह-भावना, दीनता, त्याग, सहिष्णुता, विद्वता एवं कर्मठता में निमग्न रहते थे । इसी कारण जीवन की सांध्य बेला में उन्हें 'महाप्रभु' की सम्माननीय उपाधि से भी अलंकृत किया गया था । यह विशिष्ट उपाधि महाप्रभु वल्लभाचार्य के पश्चात् गोस्वामी गोकुलनाथ जी को ही प्राप्त हुई थी, और उनके पश्चात् यह महान् उपाधि गो० हरिराय जी को ही मिल सकी, -- यह उनकी विद्वत्ता तथा जन-सम्मान की प्रतीक थी । शाह-हिम्मत लाल भोगीलाल के अनुसार 'महाप्रभु जी के अनेक गुणों के दर्शन हरिराय जी में होते थे । इसको लेकर भक्त वैष्णवों ने हरिराय जी को 'महाप्रभु जी' के नाम से सम्बोधित किया था, इससे हरिराय जी 'महाप्रभु' के नाम से प्रख्यात हैं ।२ कालानी बन्धुओं के अनुसार भी 'श्री हरिराय जी की उत्तर अवस्था विप्रयोग रस के अनुभव से पूर्ण रही थी, इसलिये उस समय सबकोई आपको 'महाप्रभु' कह कर सम्बोधित करते थे । आप श्री में महाप्रभु जी के अद्वितीय त्याग, विरह-भावना,

---

(१) श्री हरिराय जी महाप्रभु -- जीवन-चरित्र प्रका० इन्दौर - पृष्ठ- ५

(२) 'श्री महाप्रभु जी नां अनेक दिव्य गुणों श्री हरिराय जी मां थतुं, तेने लई श्री हरिराय जी ने भगवदीयो ए श्री महाप्रभु जी ना नामाभिधान थी जनाव्या छे । जे थी श्री हरिराय जी 'महाप्रभु' ना नाम थी प्रख्यात छे ।'

-- श्रीमद् गो० श्रीहरिराय जी महाप्रभु नुं जीवन-दर्शन(भाग-१।२) पृ०-३५

दीनता और 'स्वानंदतु दिलत्व' आदि अनेक धर्म प्रत्यक्ष हुए थे। इस तरह श्री हरिराय चरण 'महाप्रभु' और 'प्रभुचरण' ऐसे दोनों नामों से जाने जाते हैं।'१ जन-वाणी में उन्हें 'महाप्रभु -हरिराय चरण' के नाम से भी जाना जाता है।

-:: उपदेशक ::-

पूर्ववर्ती पृष्ठों में कहा जा चुका है कि गो० हरिराय जी वैष्णवों के मध्य नित्य-प्रति प्रवचन किया करते थे, उनके 'वचनामृत' अब भी आदर के साथ पढ़े जाते हैं। राणा रायसिंह उनके प्रवचन सुनने 'खेड़ा' नामक स्थान पर अपने राज्य से चलकर आते थे। राजकुमारी उनके उपदेशों से अत्यधिक प्रभावित हुई थीं। श्रीमद् भागवत तथा सुबोधिनी ग्रन्थों पर उनका इतना अधिकार था कि उनके सप्ताह परायण सुनने लोग दूर-दूर से आया करते थे। उन्होंने जिस स्थल पर रुक कर सप्ताह परायण या सुबोधिनी की कथाएँ कहीं थीं, वहीं पर उनकी बैठकें स्थापित होगईं। ये प्राय: गुजरात, राजस्थान, उत्तर प्रदेश, मध्य प्रदेश, आदि स्थलों का भ्रमण करते रहते थे तथा वहाँ के निवासी वैष्णव वर्ग को अपने उपदेशों से प्रभावित करते रहते थे। उनके ये प्रवचन उनकी कुछ विशिष्ट-शिष्य मंडली द्वारा लिपि-बद्ध कर लिये जाते थे। इस प्रकार उनके प्रवचन भी उनके साहित्य के परिमाण वर्द्धन में सहायक सिद्ध हुए थे।

-:: भविष्य-दृष्टा::-

सिंहाड़ ग्राम के पास 'खेड़ा' नामक ग्राम में उन्होंने राणा-रायसिंह के समक्ष भविष्यवाणी की थी कि निकट भविष्य में ही श्री द्वारकाधीश जी, विट्ठलनाथ जी तथा नवनीत प्रिया जी की सेव्य-मूर्त्तियाँ व्रज से मेवाड़ लायी जायेंगी। कुछ समय उपरान्त उनकी भविष्यवाणी सत्य निकली। तभी से ये मूर्त्तियाँ अब तक नाथद्वारा

---

(१) श्री हरिराय जी महाप्रभु - जीवन-चरित्र पृष्ठ- ५

तथा कांकरोली में विद्यमान हैं। उनके भव्य मन्दिर राणा-रायसिंह द्वारा बनवाए गए थे।

इसके अतिरिक्त जब वे देशाटन काल में घर से बाहर गए हुए थे तब उन्हें आभास हुआ कि उनके सहोदर की पत्नी का अवसान होने वाला है। इस दु:ख में डूब कर उनका भाई सेवा-भावना से विरक्त न हो जाय, यह सोच कर वे अपने लघुभ्राता गोपेश्वर जी को एक पत्र नित्य लिखकर भेजने लगे। कुछ समय उपरान्त उनकी धर्मपत्नी का देहावसान हो गया। गो० हरिराय जी के पत्र अब भी आ रहे थे। गोपेश्वर जी अत्यन्त दु:खी हुए तथा भगवत् - सेवा में भी अब उनकी रुचि न रही थी। एक दिन गोस्वामी हरिराय जी के एक विशिष्ट शिष्य हरजीवन-दास ने गोपेश्वर जी को गो० हरिराय जी के पत्र देखने के लिए कहा। गोपेश्वर जी ने इनके सभी-पत्र खोले और पढ़ने बैठ गए, पत्रों को पढ़ने से उनका दु:ख कम हुआ। उन्होंने हर जीवन दास से कहा कि तुम नित्य मेरे समीप बैठा करो, मैं इन पत्रों की व्रजभाषा-टीका करूंगा।१

गो० हरिराय जी के ये पत्र इकतालीस शिक्षा-पत्र के नाम से प्रसिद्ध हैं। इन पर गोपेश्वर जी ने व्रजभाषा टीका भी लिखी है। सम्प्रदाय में 'शिक्षा-पत्र' अत्यधिक लोक-प्रिय ग्रन्थ है। वैष्णवों में इसके नित्यपाठ का भी विधान है।

::-दैवी-शक्ति ::- सम्प्रदाय के वैष्णवों में यह विश्वास था कि गो० हरिराय जी में दैवी - शक्ति व्याप्त थी। 'श्रीनाथ जी' के स्वरूप की सेवा का आभास उन्हें उनके निवास स्थल 'खिमनौर' में ही हो जाया करता था। तब ये समय - समय पर नाथद्वारा आकर सेवा की त्रुटियों को सुधारते थे। एक मरणासन्न गाय को तृण देकर

---

(१) हरिराय जी कृत बड़े शिक्षा-पत्र - उपोद्घात् से -
-- प्रकाशक - नारायण मल जेठानन्द आसनमल बम्बई।

उन्होंने जीवन-दान दिया था ।१ राजकुमारी को माँ यशोदा के रूप में दर्शन दिया था । अपने पिता के सन्मुख स्वयं को अग्नि पुञ्ज स्वरूप में दर्शाया था । ये घटनाएँ उनकी दैवीशक्ति की प्रतीक समझी जाती हैं ।

-:: पूर्वजों के प्रति निष्ठा::-

गो० हरिराय जी अपने पूर्वज आचार्यों को सदैव स्मरण किया करते थे । अपनी ध्यान - धरा पर उन्होंने अपने पूर्वजों के शब्द-चित्र अंकित किए हैं । उनकी रचनाओं में पूर्वजों के प्रति प्रशस्ति-गायन सम्बन्धी पद विपुल परिमाण में हैं । उन्होंने अपने पूर्वजों के सम्मान में उनकी बधाइयाँ, उत्सव, प्रशस्ति आदि के विभिन्न पद-लिखे हैं । जन-श्रुति के अनुसार उन्हें अपने पूर्वज- आचार्यों का साक्षात्कार प्राप्त था ।२ जिसका वर्णन उन्होंने स्वयं एक पद में इस प्रकार किया है ।:-

केसर की धोती कटि, केसरी उपरना ओढ़ें ।
तिलक मुद्रा धरें, ठाढ़े मंदिर गिरधर के ।।
दोउन की प्रीत कछु, काहू पैं न कही जाय ।
उत नंदनंदन इन वल्लभ - सुत वर के ।।
करिकें सिंगार आजु लाड़िले कुंवर जू को ।
लेत हैं बलैया, बारि वारि दोऊ करके ।।
बैठे मुसकात जात, फूले न समात गात ।
कहें 'हरिदास' मैं निहारे दृग भरिकें ।।३।।

पद के कथन से ज्ञात होता है कि कवि प्रत्यक्ष-घटना का वर्णन कर रहा है, किन्तु कृष्ण की विविध लीलाओं के ऐसे ही वर्णन इन भक्ति - कवियों ने

---

(१) श्री हरिराय जी महाप्रभु नुं जीवन दर्शन (भाग-१।२) पृष्ठ- ४३-४४
(२) गो० महाप्रभु हरिराय जी नुं जीवन चरित्र- डा० प० पृष्ठ- ३२
(३) गो० हरिराय जी का पद साहित्य (प्रकाशित) पद सं० ६०२

अपने काव्य में अनेक स्थानों पर किए हैं। हो सकता है कि यह पद कवि के भाव-चित्रों को व्यक्त करता हो। इससे यह तो सिद्ध होता ही है कि गो० हरिराय जी अपने पूर्वजों में अटूट श्रद्धा रखते थे।

गो० हरिराय के प्रमुख सेव्य-स्वरूप श्री विट्ठलनाथ जी थे। यह देव-प्रतिमा सम्प्रति नाथद्वारा में प्रतिष्ठित है। उसका विशाल मन्दिर वैष्णवों के आकर्षण का प्रमुख केन्द्र बना हुआ है। इसी मन्दिर में गो० हरिराय जी की बैठक भी है। इसके अतिरिक्त श्री रणछोड़ लाल की प्रतिमा की भी ये सेवा करते थे। `रणछोड़ लाल जी` का देव-विग्रह किसी वीड़ाना-नामक भक्त-वैष्णव द्वारा द्वारका से डाँकोर ले जाया गया था। यवन-आक्रमण के भय से कुछ समय तक इस मूर्त्ति को गुप्त रखा गया, किन्तु उनकी सेवा व्यवस्था उचित ढंग से नहीं हो पा रही थी। गोस्वामी हरिराय जी को स्वप्न में आभास हुआ कि श्री `रणछोड़ लाल जी` वहाँ कष्ट में हैं। स्वप्न प्रेरणा को भगवद् - आज्ञा मानकर उन्होंने रणछोड़ लाल जी की देव-मूर्त्ति को गुप्त वास से निकाला। नवीन मन्दिर बनवाकर उस मूर्त्ति को प्रतिष्ठित किया।१ डाँकोर में स्थित भव्य मन्दिर आज भी प्रसिद्ध है। यहाँ उन्होंने भागवत का सप्ताह - परायण भी किया था।२ श्री प्रभुदयाल मीतल ने इनके सेव्य-स्वरूपों में `द्वारका नाथ जी` तथा `नवनीत - प्रिया` के देव-विग्रहों का भी उल्लेख किया है।३ `श्रीनाथ जी` की सेवा का भी उन्हें पर्याप्त अवसर मिला था।४

-:: सेव्य - स्वरूप ::-

---

(१) श्री हरिराय जी महाप्रभु जीवन चरित्र और साहित्य लोचन कालानी-बन्धु पृ० १९

(२) श्री आचार्य महाप्रभु जी की चौरासी बैठक- गोवर्धन, ग्रन्थ माला मथुरा पृ० २३५

(३) गो० हरिराय जी का पद-साहित्य -श्रीप्रभूदयाल मीतल पृ० ८

(४) गोवर्धन नाथ जी की प्रकाट्य वार्त्ता- गो० हरिराय जी- पृ० ८५

-:: प्रमुख-शिष्य-गण-

वैसे तो उनकी शिष्य परम्परा में सहस्रों भक्त-वैष्णव थे, किन्तु कुछ शिष्य उनकी विशिष्ट कृपा के पात्र भी थे। जिनका संक्षिप्त परिचय यहाँ देदेना समीचीन प्रतीत होता है।

::हरिजीवन-दास::

जैसा कि उल्लेख किया जा चुका है, हर जीवन दास की प्रेरणा से ही गो० हरिराय जी के लघुभ्राता श्री गोपेश्वर जी ने 'शिक्षा पत्रों' का अध्ययन किया था तथा उन्हीं के सन्निकट में बैठकर उन्होंने 'शिक्षापत्रों' की भाषा-टीका की थी।१ हरि जीवन दास गोस्वामी हरिराय जी के परमभक्त शिष्यों में से थे। ये संस्कृत के अच्छे विद्वान थे। गो० हरिराय जी इन पर अडिग विश्वास रखते थे।

:: विट्ठलनाथ-भट्ट ::

विट्ठलनाथ भट्ट एक प्रसिद्ध साहित्यकार थे। राजा मानसिंह के कहने पर उन्होंने 'सम्प्रदाय कल्पद्रुम' नामक ग्रन्थ की रचना गो० हरिराय जी से जानकारी प्राप्त कर की थी, इसका उन्होंने स्वयं अपनी रचना में उल्लेख किया है।२ 'सम्प्रदाय कल्पद्रुम' वल्लभ सम्प्रदाय का प्रमुख इतिहास ग्रन्थ माना जाता है। यह एक घटना-प्रधान ऐतिहासिक ग्रन्थ है। विट्ठलनाथ भट्ट गो० हरिराय जी के प्रमुख शिष्य थे। अनेक स्थलों पर उन्होंने अपने गुरु का उल्लेख किया है। विट्ठलनाथ भट्ट 'रस गंगाधर' के रचयिता जगन्नाथ कविराय के भाई के पुत्र थे। उन्होंने 'सम्प्रदाय कल्पद्रुम' की रचना संवत् १७२९ में की थी।

---

(१) इसी अध्याय के पृष्ठ- ३५ पर।

(२) 'स्रवन सुन्यौ हरिराय मुख, करन लिख्यौ नृपमान।'

सम्प्रदाय कल्पद्रुम -

-: शोभा मा जी :- इन्होंने 'शोभा' छाप से गुजराती एवं ब्रजभाषा में अनेक रचनाएँ की थीं। द्वारका दास परिख ने इनकी रचनाओं के कतिपय उद्धरण इस प्रकार दिए हैं :-

'अ' हरिदास प्रभु 'शोभा' निरखत ।
मन क्रम बचन इनके गुन गाए ।।

'ब' जुगल जोरी हरिदास 'शोभा' निरखत,
दुहु कर जोरिकैं करत नमने ।

'स' गुजराती :-

ए 'शोभा' जोई हरिदास जाइ बलिहारी ।१

उपर्युक्त पदों को 'द्वारका दास परिख ने 'शोभा' जी कृत बताया है। इनमें 'हरिदास' छाप देखने से कुछ भ्रांति होती है कि ये पद किसी 'हरिदास कवि' के लिखे हुए हैं। किन्तु वास्तव में ये पद शोभा जी के ही हैं। इन्होंने गोस्वामी हरिराय जी से 'ब्रह्म-संबंध' लिया था, इसलिए इन पदों में अपने गुरु का नाम इन्होंने रख दिया है।

काका वल्लभ का जन्म संवत् १७०३ में हुआ था।२ काका वल्लभ गोस्वामी हरिराय जी के प्रति अत्यन्त श्रद्धाभाव रखते थे। ये एक भावुक-कवि तथा विद्वान पुरुष थे। 'भगवदीय नाम मणिमाला' नामक ग्रन्थ इनका लिखा हुआ है। इसके अतिरिक्त इनके द्वारा रचित अनेक धोल पद भी

-:: काका-वल्लभ ::-

---

(१) देखिये-- गो० हरिराय जी नूं जीवन-चरित्र (गुजराती) श्री द्वारकादास परिख
(२) श्री गिरधरलाल जी के १२० वचनामृत- सं० लल्लूभाई, छगनलाल देसाई अहमदाबाद प्र० संस्क० पृष्ठ- ५९

मिलते हैं। इन्होंने अपने पदों में 'दास', 'श्री वल्लभ' तथा 'वल्लभदास' तीन 'छापों' का प्रयोग किया है।१ इनकी रचनाओं में गो० हरिराय जी का उल्लेख प्राय: मिलता है,--

ये भगवदीय ना स्वरूप जे, लीला माँ क्यिमान ।
कृपा करी हरिराय जी समलाव्यां सहुनाम ।।

+ + + +

कंठे पहेरे प्रकाश पामे मनमाँ वारे आनंद ,
कृपा श्री हरिराय पूरण थाए परमानन्द ।
ए भगवदीय चरण रजनी सदा राखूँ आस ,
कृपा करो मने दीन जाणी, गाए वल्लभ दास ।।२

इसी प्रकार इन्होंने चौरासी वैष्णवों के धोल में भी हरिराय जी का उल्लेख सादर किया है। ---

ए वैष्णव पद कमल रजरति तणी छे अति आश ।
गाए गुण हरिदास नाँ , पद - रज वल्लभदास ।।३

इसके अतिरिक्त 'चरण चिन्ह वर्णन' नामक इनकी एक रचना तो गो० हरिराय जी की रचना के नाम से ही प्रसिद्ध है।४ काका वल्लभ ने अपनी इस रचना में गो० हरिराय जी का उल्लेख इस प्रकार किया है--

---

(१) देखिये-- दो सौ बावन वैष्णवन की वार्त्ता (भाग-३) सम्पा० द्वारकादास परिख- सम्पादकीय लेख से।

(२) वही, -- 'भगवदीय नाम मणिमाला' से- पृष्ठ- ६

(३) धोल-पद प्रकाशक वैष्णव हरिगोविन्द दास हरिदास, नाथद्वारा प्रथम- संस्क० सं० २००७, पृष्ठ- ३२

(४) सरस्वती भंडार कांकरोली- वंच संख्या-२३ पुस्तक- ७

अब श्री षोडस चिन्ह बखानु ।
चरन- कमल उर अन्तर जानु ।।
अनन्यपासन आसन मानौ ।
श्री हरिराय प्रताप यह जानौ ।।

जानौ श्री हरिराय बुध बल जब सरन मोकूं दियौ ।
ब्रह्मवानी कहीं मुख ते, ग्रन्थ एक अद्भुत कियौ ।।१

उपर्युक्त उद्धरण से ज्ञात होता है कि काका वल्लभ गो० हरिराय जी का बहुत आदर करते थे ।

इस प्रकार इनके शिष्यों में साहित्य के प्रति विशेष रुचि थी । इनके शिष्यों ने अपनी रचनाएँ गो० हरिराय जी के सानिध्य में ही की थीं । उन्हें सैद्धान्तिक सूचनाएँ इन्हीं से प्राप्त हुई थीं ।

साहित्यगत:-

-:: साहित्य-कार::-

गो० हरिराय जी सम्प्रदाय के विद्वान आचार्य होते हुए एक योग्य साहित्यकार भी थे । साहित्य सृजन की अदम्य शक्ति उनके ग्रन्थों के परिमाण से ही जानी जासकती है । उन्होंने सैकड़ों ग्रन्थों का प्रणयन किया था । संस्कृत के ये उद्भट विद्वान थे । सम्प्रदाय में यह प्रसिद्ध है कि वल्लभ-मत को गो० हरिराय जी के ग्रन्थों के अध्ययन के बिना नहीं जाना जा सकता । सम्प्रदाय का कोई भी ऐसा विषय नहीं रहा जिस पर उन्होंने अपनी लेखनी न उठाई हो ।२

---

(१) सरस्वती भण्डार, कांकरोली-- बंध सख्या-२३ पुस्तक- ७
(२) वार्ता-साहित्य एक अध्ययन - डा० हरिहर नाथ टन्डन, पृष्ठ- ४००

-:: गद्य-लेखक ::-

संस्कृत के अतिरिक्त ब्रजभाषा में साहित्य सृजन कर उन्होंने तत्कालीन आचार्यों को लोक-भाषा में लिखने के लिये प्रेरित किया। ब्रजभाषा गद्य का एक निश्चित स्वरूप उनके द्वारा ही निरूपित हुआ था। 'वार्ता-साहित्य' में शैली का सुष्ठु रूप तथा भाव-प्रकाश, हिन्दी साहित्य को उन्हीं की देन कहा जासकता है। 'ऐसा प्रतीत होता है कि वैष्णवों में जितने गद्य ग्रन्थ हरिराय जी ने लिखे हैं, उतने शायद ही किसी ने लिखे हों। प्राचीन ब्रजभाषा अथवा हिन्दी में गद्य ग्रन्थों का एक-प्रकार का अभाव-सा बतलाया जाता है, खोज में इन ग्रन्थों के आने से एक कमी की पूर्ति हुई है।'[१]

-:: काव्य-कार ::-

पद्य -साहित्य में भी उनका साहित्य परमानन्द, सूरदास तथा नन्ददास को छोड़कर परिमाण व स्तर में अष्टछाप के किसी भी कवि से कम नहीं हैं। ब्रजभाषा में रचे हुए उनके सहस्राधिक पद मिलते हैं।

-:: लोक-कवि ::-

गोस्वामी हरिराय जी अपने सम्प्रदाय के वैष्णवों में एक सफल लोक-कवि हुए हैं। उनकी रचनाएँ उनके अनुयायियों में अत्यधिक प्रचलित हैं। इनका सामूहिक तथा नित्यगान होता है। नित्य-उत्सव तथा वर्षोत्सव के विविध कीर्तन-संग्रहों में उनके पद निहित हैं। सम्प्रदाय का ऐसा कोई भी पद-संग्रह नहीं, जिनमें गो० हरिराय जी के पद न मिलते हों। उनके पदों को कहीं-कहीं पर तो सर्वाधिक महत्ता प्राप्त है, नित्यलीला, सनेहलीला आदि उनकी विशिष्ट-सम्मान प्राप्त रचनाएँ हैं।

---

(१) हस्तलिखित हिन्दी ग्रन्थों का पन्द्रहवां त्रै-वार्षिक विवरण, नागरी प्रचारिणी सभा द्वारा प्रकाशित

-:: बहु-भाषा-विद::-

गो० हरिराय जी ने ब्रजभाषा के अतिरिक्त पंजाबी, गुजराती, मारवाड़ी, राजस्थानी आदि बोलियों में भी फुटकर पद लिखे हैं, जो वल्लभ-सम्प्रदाय में कीर्तन तथा भजन रूप में अब भी गाए जाते हैं। इसके अतिरिक्त इनके कुछ छन्दों में खड़ी बोली का रूप भी देखा जा सकता है। एक उदाहरण द्रष्टव्य है ---

तू बनरा रे बनि बनि आया, मो मन भाया सुख उपजाया,
अति उतंग नीली घोड़ी चढ़ि, धरि सिर सेहरा अतिसुन्दर-
अँग सुगंध लगाया।
अपने संग सकल जन सोहैं, तिलक लिलार बनाया,
'रसिक प्रीतम' बलिहारी जाऊँ, उठि हँस अँग लगाया ।।१

जैसा कि पूर्ववर्ती पृष्ठों में कहा जा चुका है कि गो० हरिराय जी संस्कृत के भी प्रकाण्ड विद्वान थे। इस प्रकार उनके बहुभाषा-विद होने के प्रमाण मिलते हैं।

-:: अनुवादक::-

कवि तथा लेखक होने के अतिरिक्त गोस्वामी हरिराय जी एक कुशल अनुवादक भी थे। उन्होंने अनेक संस्कृत-ग्रन्थों की संस्कृत तथा ब्रजभाषा में टीकाएँ की हैं। उनकी ब्रजभाषा टीकाओं के नामांकन 'कृति-परिचय' नामक अध्याय में दिए जायेंगे। वल्लभ सम्प्रदाय का प्रमुख साहित्य जो बल्लभा-चार्य तथा गुसाईं जी द्वारा रचा गया है, प्राय: सभी संस्कृत में ही है। सम्प्रदाय के जन-साधारण के लिये उनका मनन करना सुलभ नहीं। इस प्रकार गोस्वामी हरिराय जी ने इन ग्रन्थों की ब्रजभाषा टीका प्रस्तुत करके इसे जन-सामान्य के लिये सुबोध बना दिया है। सम्प्रदाय में वे एक अनन्यतम साहित्यकार थे।

---

(१) गोस्वामी हरिराय जी का पद साहित्य (प्रकाशित) पृष्ठ-७६

इस प्रकार हम देखते हैं कि गोस्वामी हरिराय जी अपने समय के एक कुशल साहित्यकार थे, उनके इस व्यक्तित्व का उनके परिकर पर व्यापक प्रभाव रहा था ।

गोलोकवास :-

गोस्वामी हरिराय जी ने एक सौ पच्चीस वर्ष की पूर्णायु प्राप्त की थी । उनका निधन खिमनौर ग्राम में संवत् १७७२ में हुआ था । उनकी वृद्धावस्था के समय अनेक गोस्वामी जिज्ञासु उनके समीप रहते थे । अपने प्रभुत्वशाली व्यक्तित्व तथा साहित्य सृष्टा के रूप में वे अत्यधिक प्रसिद्ध हो चुके थे । श्री द्वारकादास परिख ने उनके निधन काल के सम्बन्ध में दो संवतों का उल्लेख किया है । परिख जी के अनुसार संवत् १७७२ तथा संवत् १७७५ में से किसी एक संवत् को उनका निधन हुआथा । किन्तु अन्य सभी विद्वानों ने संवत् १७७२, इनका निधन काल एक मत से स्वीकार किया है । १

खिमनौर में बावड़ी के ऊपर उनकी एक छत्री समाधि के रूप में अब भी बनी हुई है । उनके देहावसान के पश्चात् उदयपुर के राणा ने उनके सेव्य स्वरूप श्री-विट्ठलनाथ जी को सिंहाड़ ग्राम के समीप खेड़ा नामक स्थान पर प्रतिष्ठित किया । वहाँ पर उन्होंने एक मन्दिर भी बनवाया था ।२ बाद में उनकी सेव्य-मूर्त्ति को कोटा ले जाया गया था ।३ सम्प्रति यह

---

(१) श्री प्रभुदयाल जी मीतल, डा० हरिहरनाथ टन्डन, डा० दीनदयालु गुप्त प्रभृति विद्वानों के अनुसार ।

(२) देखिये-- आचार्य महाप्रभु जी की चौरासी बैठक, प्रका० बजरंग पुस्तकालय मथुरा- पृष्ठ- २३२ ।

(३) वही ।

देव विग्रह नाथद्वारा में विट्ठलनाथ जी के मन्दिर में विद्यमान है। इस मन्दिर में गोस्वामी हरिराय जी ने एक वृहद् पुस्तकालय का भी निर्माण किया था, जिसमें उनके सभी ग्रन्थों के अतिरिक्त और भी विपुल ग्रन्थों का संग्रह था, किन्तु उनके वंशजों की उदासीनता एवं साहित्य के प्रति अरुचि से वह विशाल ग्रन्थागार नष्ट होगया। इस समय यत्किंचित साहित्य जो उनके उत्तराधिकारियों के पास है भी वह किसी को दिखलाया नहीं जाता। उस बचे हुए साहित्य का कुछ भी उपयोग होना असम्भव सा प्रतीत होता है। ग्रन्थ स्वामियों की इसी मनोवृत्ति के परिणाम-स्वरूप सम्प्रदाय का बहुत सा साहित्य नष्ट होगया और हो रहा है।

गोस्वामी हरिराय जी के पश्चात् उनके दत्तक पुत्र श्री गिरधर जी द्वारा उनका वंश क्रम आगे बढ़ा, इस समय बड़ोदा, इन्दौर व नाथद्वारा में उनके वंशज बसे हुए हैं।

गोस्वामी हरिराय जी के जीवन का पूर्ण अध्ययन करने के पश्चात् अब उनके कृतित्व का परिचय अगले अध्याय में किया जा रहा है।